विपाकसूत्र

(हिन्दी अनुवाद)



अनुवादक—

पूज्यपाद विद्वद्वर्य्य मुनिवर्य्य वीरपुत्र श्री आनन्द सागरजी महाराज.

प्रकाशक—

श्री हिन्दी जैनागम प्रकाशक सुमति कार्यालय—कोटा राजपूताना.



वीर सम्वत् २४६२ विक्रम सम्वत् १९९२ सन् १९३५

अनुत्तरोववाई, उववाई, अंतगडदशा आदि छपरहे हैं तथा अन्य सूत्रों को छपाने का व ५०० जगह अमूल्य भेट देने का प्रबन्ध होरहा है।

इस उद्देश की पूर्त्ति के लिये १५०००) का सहायता फण्डकी योजना की है उसमें उपदेश देकर सहायता दिलवाने वालों के शुभ नाम ये हैं— गणाधीश श्रीमान् हरिसागरजी महाराजके उपदेशसे लगभग १५००) सहायता फण्डमें तथा उववाई सूत्र छपवाने में १०००), श्रीमान् मंगलसागरजी म० के उपदेश से १००) विपाकमें, श्रीमती साध्वीजी चन्दन श्रीजी के उ० से २००), श्रीमती जतनश्रीजी के उ० से २००), श्रीमती प्रताप श्रीजी के उ० से १००), श्रीमती दया श्रीजी के उ० से १००), श्रीमती प्रमोद श्रीजी के उ० से १००), श्रीमती देव श्रीजी के उ० से १००), श्रीमती प्रेम श्रीजी के उपदेशसे १००) सहायता फंडमें व २००) विपाक सूत्रमें, श्रीमती ज्ञान श्रीजी के उ० से २००), श्रीमती गुण श्रीजी के उ० से १००), श्रीमती कनक श्रीजी के उ० से ६०), श्रीमान् दीवान बहादुर सेठ केशरी सिंहजी १००). इस प्रकार भर गये हैं और मुंबई, कलकत्ता, बीकानेर आदिमें भरानेका प्रयत्न शुरू है इसमें से कुछ रकम सेठ जी के यहाँ आकर जमा हो चुकी है और बाकी आने वाली है इसका विशेष विवरण दूसरे सूत्र में छापा जायगा। इन अनुवादक महाशयों को और सहाय दाता उपदेशक महाशयों को हम वारम्वार धन्यवाद देते हुए बड़ा उपकार मानते हैं और आशा करते है कि भविष्य में भी सूत्रों के अनुवाद में तथा सहायता फण्ड में यथोचित्त सहायता देकर ज्ञान दान के लाभ के भागी बनें और हमारे उत्साह को बढ़ाते रहें।

मिति कार्त्तिक शुदी ८ सम्वत् १९९२
तारीख ४ नवम्बर सन् १९३५

निवेदक.— चन्दनमल रीखवदास लूणिया सेक्रेटरी
श्री हिन्दी जैनागम प्रकाशक सुमति कार्यालय जैन प्रेस, कोटा.



❋ मेरा वक्तव्य ❋

मेरे लिये यह अत्यन्त हर्ष का विषय है कि जिनागम की सेवा करने मे मैं भाग्यशाली हो सका हूँ; यद्यपि यह स्पष्ट है कि सूत्र का अनुवाद तो एक निष्णात (काबिल – कुशल) महात्मा ही कर सकता है; तथापि सूत्र भक्ति के विवश होकर मेरे जैसे अल्पात्मा ने इस ग्यारहवें अङ्ग ' विपाक सूत्र ' का हिन्दी अनुवाद करने का सहास किया है.

आगमोदय समिति द्वारा प्रकाशित सूत्र पर से यह अनुवाद किया गया है, यह दुःख की बात है कि समिति से प्रकाशित सूत्र में कइ जगह गलतियाँ दृष्टिगोचर होती है– शुद्धकर्त्ता ने असावधानी से इसका संशोधन किया प्रतीत होता है; संभव है कि अन्य सूत्रों की भी यही परिस्थिति हो.

यह सूत्र दो विभागों में विभक्त होकर वीस अध्ययनों से शोभित है– दुःख विपाक नामक पहिले विभाग में दस पुण्यहीन जीवों के जीवन–चरित्र सभ्य संसार को सहसा जागृत कर कर्तव्य परायण बनादेते हैं; और सुख विपाक नामक दूसरे विभाग में दस पुण्यशाली जीवों के जीवन चरित्र सद्धर्म की आचरणा करने को लालायित करते हैं; बस इन दो श्रुतस्कंधों में (विभागों में) यह ग्रन्थ पूर्ण हुवा है.

यह ग्रन्थ " श्री हिन्दी जैनागम प्रकाशक सुमति कार्यालय कोटा–राजपूताना " से प्रकाशित होरहा है, इस कार्यालय के संस्थापक पूज्यपाद महोपाध्याय श्री सुमतिसागर जी महाराज तथा मुनिमहोदय पं० श्री मणिसागर जी महाराज अनेक कष्ट सहन करके भी दृढता पूर्वक प्रकाशन कार्य सम्पादन कर रहे हैं, यह आपका उपकार प्रशंसनीय है, खासकर विद्वद्वर्य्य – प्रकृति भद्र–उद्यमी–प्रेमी और मिलनसार पूज्य श्री मणिसागर जी महाराज का अथाह परिश्रम भूरि २ धन्यवाद के पात्र है.

इसका शोधन कार्य यद्यपि ध्यान पूर्वक किया गया है तदपि दृष्टि दोष से वा प्रेसमैन की असावधानी से त्रुटियाँ रहजाना संभव है, पाठक महानुभाव सुधारकर वाँचें, यह मेरी प्रार्थना है—इस आगम का साद्योपान्त (शुरू से आखीर तक) मनन पूर्वक बाँचने वा श्रवण करने का मेरा अनुरोध है।

सैलाना (मालवा)
श्रावण पूर्णिमा–बुधवार
२४६१–१९९२–१९३५

शुभं भूयात्.

आपका विनीत—
मुनि महेन्द्र सागर.

विपाक-सूत्र हिन्दी अनुवाद

विषयानुक्रमाणिका

प्रथमश्रुत स्कन्ध दुःख विपाक

* पहिला अध्ययन *

नं०	विषयों के नाम.	पृष्टाङ्क
१	मङ्गलाचरण	१
२	उत्थान	२
३	पीठिका—	४
	१ श्री सुधर्म स्वामी गणधर म० का पदार्पण	४
	२ जम्बू स्वामी के गुणानुवाद और प्रश्नोत्सुकता	६
	३ सुधर्म स्वामी से पृच्छा और उनका प्रत्युत्तर	११
४	मृगापुत्र	१४
५	एक जन्मान्ध पुरुष प्रभु के निकट	१६
६	गौतम गणधर की मृगापुत्र देखने की अभिलाषा	२०
७	गौतम गणधर मृगादेवी के घर पर	२२
८	मृगापुत्र देखने को तलघर में प्रवेश	२६
९	गौतमस्वामी का करुणाभाव	३०

नं०	विषयों के नाम.	पृष्ठांक
५१	दगाबाजी का नमूना	१६४
५२	अभग्नसेन के लिये गणधर महाराज की भाविपृच्छा महावीर भगवन्त का उत्तर	१६६
५३	उपसंहार	१६९
	❀ चौथा अध्ययन ❀	
५४	शकट – पात्रों का परिचय	१७१
५५	भगवन्त का पदार्पण गौतम गणधर की पृच्छा	१७४
५६	शकट का पूर्वभव प्रभु फरमाते हैं–पापचर्या में–अलमस्तता	१७५
५७	सेठ के घर पुत्र का जन्मोत्सव–घर से निर्वासन	१७९
५८	वेश्यागमन और तिरस्कार	१८१
५९	प्रधान का कोप–शकट की दुर्दशा	१८३
६०	परमातमा ने शकट का भविष्य फरमाया	१८५
६१	उपसहार–	१८९
	❀ पांचवाँ अध्ययन ❀	
६२	बृहस्पतिदत्त–सामान्य परिचय	१९१
६३	भगवन्त का पदार्पण एक दयापात्र की पृच्छा–बृहस्पतिदेव का जुल्मी पूर्वभव	१९३
६४	शतानीक राजा का मरण और उदायन कुमार–का राज्यारोहण	१९७
६५	विश्वास से भयंकर परिणाम	१९९
६६	अनाचार का फल	२००
६७	अंतिम पृच्छा और उसका खुलासा	२०१
६८	उपसंहार	२०३

❁ छट्ठा अध्ययन ❁



नंबर	विषयों के नाम.	पृष्टांक
६९	नन्दिवर्धन अथवा नन्दिसेन–अध्ययन का बीजक	२०४
७०	गौतमस्वामी ने एक अत्यन्त दयाजनक दृश्य देखा प्रभु से पृच्छा और प्रत्युत्तर	२०६
७१	नन्दिवर्धन का पूर्वभव	२०९
७२	कोतवाल के पास दंड देने की सामग्रियों	२१०
७३	घोर दण्ड दिये जाने की योजनाएँ	२१४
७४	पापी कोतवाल की दुर्गति	२१९
७५	लोभांधता से पुत्र का पिता के प्रति जुल्मी विचार–उग्रपाप का प्रत्यक्ष फल	२२१
७६	आख़िरी खुलासा	२२५
७७	उपसंहार	२२७

❁ सातवाँ अध्ययन ❁



नंबर	विषयों के नाम.	पृष्टांक
७८	उम्बरदत्त	२२८
७९	गौतम स्वामी एक दुःखी भिखारी को देखते हैं	२२९
८०	गौतम स्वामी उस भिखारी के विषय में पृच्छा करते हैं–भगवन्त खुलासा पूर्वक पूर्वभव फरमाते हैं	२३५
८१	धनवन्तरी वैद्य का पापोपदेश-नरक गतिकी प्राप्ति	२३९
८२	गंगदत्ता ने यक्ष की मानता की–पुत्रफल की आप्ति	२४२
८३	गंगदत्ता को मोजमज़ा करने का दोहला उत्पन्न हुवा	२५०
८४	पुत्रका जन्म–माता पिता का विरह–कष्टमय भिखारी दशा	२५२
८५	अन्तिम पृच्छा और उस का बढ़िया खुलासा	२५४

द्वितीय श्रुतस्कन्ध-सुखविपाक

● पहिला अध्ययन ●

नंबर	विषयों के नाम.	पृष्ठांक
११८	उत्थानिका	३२९
११९	सुबाहु कुमार-संक्षिप्त परिचय	३३२
१२०	सुबाहु कुमार का जन्म-विवाह और एश आराम	३३३
१२१	भगवन्त का पदार्पण कुमार का व्रत ग्रहण करना	३३६
१२२	कुमार के लिये गणधर महाराज की पृच्छा	३४०
१२३	भगवान् का प्रत्युत्तर पूर्वभव का बयान	३४३
१२४	तपोधन मुनि को सुमुख गाथापति का पूर्णभाव से दान देना-दान से अपूर्व लाभ	३४५
१२५	दीक्षा का प्रश्न-भगवन्त का विहार-कुमार का जानपन	३५१
१२६	दीक्षा के लिये कुमार की पूर्ण अभिलाषा-भगवन्त का पदार्पण	३५३
१२७	प्रभु की देशना का श्रवण-पूर्ण प्रेम से दीक्षा का अङ्गीकार और उसका यथार्थ पालन	३५७
१२८	कुमार को ज्ञान सम्पादन-परभव में प्रस्थान	३५९
१२९	सुबाहु कुमार का अन्तिम सुन्दर निर्णय	३६०
१३०	उपसंहार	३६३

● दूसरा अध्ययन ●

नंबर	विषयों के नाम.	पृष्ठांक
१३१	भद्रनन्दी कुमार	३६४

नंबर	विषयों के नाम.	पृष्टांक
	❁ तीसरा अध्ययन ❁	
१३२	सुजात कुमार	३६६
	❁ चौथा अध्ययन ❁	
१३३	सुवासव कुमार	३६८
	❁ पॉचवा अध्ययन ❁	
१३४	जिनदास कुमार	३६९
	❁ छट्टा अध्ययन ❁	
१३५	धनपति कुमार	३७१

नंबर	विषयों के नाम.	पृष्टांक
	❁ सातवाँ अध्ययन ❁	
१३६	महाबल कुमार	३७२
	❁ आठवाँ अध्ययन ❁	
१३७	भद्रनन्दी कुमार	३७४
	❁ नवाँ अध्ययन ❁	
१३८	महाचन्द्र कुमार	३७५

नंबर	विषयों के नाम.	पृष्ठांक
	❀ दसवाँ अध्ययन ❀	
१३९	वरदत्त कुमार	३७६
१४०	उपसंहार	३७९
१४१	परिसमाप्त	३८०
१४२	ग्रन्थ का उपसंहार	३८१
१४३	टीकाकार का निवेदन	३८२
१४४	टीकाकार का परिचय	३८२
१४५	प्रशस्तिका	३८३



॥ समाप्त ॥

❀ भूल सुधार ❀

प्रेसमेन की गलती से व दृष्टिदोष से रही हुई भूलों का सुधार निम्नाङ्कित है-

१ पृष्ट २९ लाइन ३ के ब्रेकेट में (आठ २ कोस) चाहिये.

२ पृष्ट ५६ मूल की दूसरी लाइन के आगे छूटगया-

मूल— भारहे वासे वेड्ढगिरिपायमूले सहिकुलंसी सीहत्ताए पच्चायाहिति, से णं तत्थ सीहे भविस्सत्ति अहम्मिए जाव साहासिए सुबहुं पावं जाव समज्जिणति जाव समज्जिणत्ता काल मासे कालं किच्चा ।

३ पृष्ट ६८ की टिप्पणी में — उन्मान की व्याख्या कल्पसूत्र की कल्पद्रुम कलिका और सुबोधिनी टीका वगैरः से जानाना—ऐसा चाहिये

शान्ति. V A. S

परम पूज्या गुरु वर्या श्री विनयश्री जी म. की शिष्या विचित्रश्री का यह सूत्र है





श्री विपाक सूत्र

हिन्दी अनुवाद



अनुवादक—प्रखरवक्ता वीरपुत्र श्री आनन्द सागरजी महाराज.

(मङ्गलाचरण)

वन्दन हो अरिहन्त को। सिद्ध–साधु आधार ॥ हिन्दी विपाक सूत्र की। सुन्दर रचना सार ॥ १ ॥

❀ पीठिका ❀

❀ श्री सुधर्म स्वामी गणधर महाराज का पदार्पण ❀

मूल—तेणं कालेणं तेणं समएणं चंपा णामं णयरी होत्था, वण्णओ, पुन्न भद्दे चेइए–तेणं कालेणं तेणं मएणं समणस्स भगवओ महावीरस्स अन्तेवासी अज्ज सुहम्मे णामं अणगारे जाइ सपन्ने वण्णओ, चउदस्स पुव्वी चउनाणोवगए पंचहिं अणगारसएहिं सद्धिं संपरिवुडे पुव्वाणुपुव्विं जाव जेणेव पुण्णभद्दे चेइए अहापड़िरूवं जाव विहरइ, परिसा निग्गया, धम्मं सोच्चा, निसम्म जामेव दिसं पाउभूया तामेव दिसं पडिगया।

अर्थः—उस काल उससमय में चम्पा नामकी नगरी थी, उसका वर्णन करना × पूर्णभद्र नामका उद्यान था,

---

× वापिवप्रविहारवर्णवनिता वाग्मी वन वाटिका। विद्वद्ब्राह्मण वादिवारिविबुधा वेश्या वणिग्वाहिनी ॥
विद्यावीरविवेकवित्तविनयो वाचंयमो वल्लिका। वस्त्रं वारणवाजिवेसरवरं राज्यं च वै शोभते ॥ १ ॥

एक चरित्र पर से—

भावार्थ—वावड़ियाँ, शहरपना, देवमन्दिर, चारोंवर्ण, सुन्दर स्त्रियाँ, गुणी, वनखंड, वगीचियाँ, विद्वान्, ब्राह्मण (भिक्षुक नहीं), विवाद

उस काल उस समय श्रमण भगवान् महावीर स्वामी के शिष्य आर्य सुधर्म नामके महा मुनीश्वर जाति सम्पन्न यानी उग्र कुलके थे, उनका वर्णन करना, वे चौदह पूर्वधारी, चार ज्ञानयुक्त, पांच सौ मुनियों से परिवृत, क्रमशः (ग्रामानुग्राम विचरते हुए) यावत् जहां पर पूर्णभद्र नामका यक्ष मन्दिर है उस उद्यान में यथाप्रतिरूप (मुनियों के योग्य) आश्रय ग्रहण करके रहे—पर्षदा बाहर निकली, धर्म सुना, सुनकर जिस दिशा से प्रकट हुई थी (आई थी) उस दिशा में वापिस चली गई।

सूचना—मूल का अर्थ करने के पश्चात् जिस २ पद का या वाक्य का टीकाकार महाराज ने विशेष अर्थ किया है वह प्रकाशित करेंगे, जहां पर मूल और टीका का समान अर्थ होगा वहां पर टीकार्थ में प्रायः नहीं लिखा जायगा; इस नियम का पालन सर्वत्र होगा।

टीकार्थः—'णंकार' वाक्य का अलङ्कार भूत है, 'एकार' प्राकृत भाषा से उत्पन्न है—काल और समय एकार्थी हैं, फिर पृथक् कहने में विशेपता क्या है? उत्तर में विदित हो कि इस में समान्य विशेष की विशेपता है—यहां पर वर्त्तमान अवसर्पिणी (पतन काल)

करने वाले वादि, सरस्वती महादेवी, पंडित, गणिका, व्यापारी, नदियाँ, विद्या, वीर, विवेक, धन, विनय, मुनिवर, वेले, वस्त्र, हाथी, घोड़े खच्चर और श्रेष्ठराज्य, इस नगरी में शोभते थे, अर्थात् यह नगरी इन वस्तुओं से शोभिता थी।

वज्रऋषभ नाराच संघयण * से वाह्नित हैं, ये दोनों विशेषण आगम में प्रसिद्ध हैं-सुवर्ण खण्ड के घसने से कसोटी पर रेखा समान चमक दार और कमल के गर्भ समान गौर वर्ण वाले है-'उग्गतवे' उग्रतपस्वी-तपस्या में दूसरे से परास्त नहीं हो सके ऐसे तप के धारी 'दित्त तवे' दिप्त तपस्वी-अग्निके माफिक् देदिप्यमान्; अर्थात् कर्म रूपी वन को दहन करने में ज्वलन्त तेज रूप तपको धारण करने वाले 'तत्ततवे' तप्त तपस्वी-तपको तपाने वाले यानी उनने इस तरह का तप किया है कि जिसके द्वारा कर्मों को संतप्त कर उस ही तप से अपनी आत्मा को तप स्वरूप संतप्त की है, जिससे अन्य के लिये वह तप अछूत होगया है, अर्थात् वैसा तप नही कर सकते 'महातवे' प्रशस्त तपस्वी या महा तपस्वी-'उराले' उदार या प्रधान, वा भीम तपकर्त्ता-अतिकष्ट मय तप करने से समीप वासी कमजोरों को भय उत्पन्न करने वाले. 'घोर तवस्सी' उग्र तपस्वी-'घोरे' निर्दय-परिषहादि शत्रुओं के नाश करने में निर्दय-'घोर गुणे' भयंकर गुण के धारी-दूसरे कठिनता से आचरण कर सकें ऐसे गुण के धारी 'घोर बंभचेरवासी' भयंकर ब्रह्मचर्य में वसने वाले-असक्त लोग जिस की दुःख पूर्वक आचरणा कर सकें ऐसे उग्र ब्रह्मचर्य के पालक 'उच्छूढ सरीरे' शरीर के त्यागी-शरीर के उपचार का त्याग करने से शरीर त्यागी हैं 'संखित्त विउल तेउलेस्से' संक्षेप और विपुल तेजो लेश्या वाले-शरीर के अन्तरगत रहने से संक्षेप और अनेक योजन प्रमाण क्षेत्र

---

* मरकटवन्द पर कसा हुवा पाटा उस पर ठोकी हुई खील के समान मास, हाड़ और नसों की जुड़ी हुई मजबूती के बराबर मजबूत बंधे को 'वज्र ऋषभ नाराच संघयण' कहते हैं।

में रही हुई वस्तुओं को जलाने मे समर्थ इससे विस्तार वाली तेजोलेश्या + के धारी 'उड्ढंजाणु' ऊँचे घुटने वाले-शुद्ध पृथ्वी के आसन का त्याग होने से और कटासन का अभाव होने से कुकुड़ आसन से रहे हुवे 'अहो सिरो' नीचे शिरवाले-ऊँची और तिर्छी दृष्टि के अभावि 'झाण कोट्ठोवगए' ध्यानरूप कोठार मैं प्राप्त हुवे-संयम तप से आत्म भावना करते हुवे जम्बू स्वामी विचरते हैं; इस प्रकार का दृश्य जानना. तदनन्तर—

१ 'जाय सड्ढे' श्रद्धावाले-इच्छित अर्थ को श्रवण करने की वॉच्छा मे प्रवृत्तमान् 'जाव' यावत् शब्द से इस तरह जानना- २ 'जाय संसए' शंसय वाले-अनिर्णित अर्थ यानी पदार्थ पर शंसयवान् ३ 'जाय कोउहल्ले' कुतुहल वाले-श्रवण करने की उत्सुकता में प्रवृत्तमान—१ 'उपन्न सड्ढे' उत्पन्न श्रद्धा वाले-पहिले नही थी और पीछे श्रद्धा उत्पन्न हुई. २ 'उपन्न संसए' उत्पन्न शंसय वाले-पहिले नही था और पीछे शंसय उत्पन्न हुआ ३ 'उपन्न कोउहल्ले' उत्पन्न कुतुहल वाले-पहिले नही था और पीछे कुतुहल उत्पन्न हुआ- १ 'संजाय सड्ढे' सम्यक् श्रद्धावाले-अच्छी तरह से प्रवर्ती है श्रद्धा जिसकी. २ 'संजाय संसए' सम्यक् शंसय वाले-अच्छी तरह प्रवृत्त हुवा है शंसय जिसको. ३ 'संजाय कोउहल्ले' सम्यक् कुतुहल वाले-अच्छी तरह प्रवृत्त हुवा है कुतुहल जिसको—१ 'समुपन्न सड्ढे' सम्यग् उत्पन्न श्रद्धावाले-पहिले नहीं थी और पीछे अच्छी तरह उत्पन्न हुई है इच्छित पदार्थ को श्रवण करने की इच्छा जिसकी 'समुप्पन्न संसए' सम्यग् उत्पन्न शंसय वाले-पहिले नहीं था और पीछे अच्छी तरह उत्पन्न हुवा है शंसय जिसको. ३ 'समुपन्न कोउहल्ले'

+ अमुक विशिष्ट तपसे उत्पन्न हुई लब्धि विशेष को 'तेजोलेश्या' कहते हैं।

मियापुत्ते १ य उज्झियते २ । अभग्ग ३ सगडे ४ वहस्सइ ५ नंदी ६ ॥
उंबर ७ सोरिय दत्ते ८ य । देवदत्ता ९ य अंजुया १० ॥ १ ॥

जइणं भंते ! समणे णं आइगरे णं तित्थयरे णं जाव संपत्ते णं दुहविवागाणं दस अज्झयणा पन्नत्ता, तंजहा—१ मिया पुत्तेय जाव १० अंजुया; पढमस्स णं भंते ! अज्झयणस्स दुह विवागाणं समणे णं जाव सम्पत्ते णं के अट्ठे पन्नत्ते ? तते णं से सुहम्मे अणगारे जम्बू अणगारं एवं वयासी—

अर्थ—हे भगवन्त ! (पूज्य गुरुदेव !) श्रमण भगवन्त महावीर देव यावत् सम्प्राप्त हुए यानी मोक्ष को पधारे उन्होंने दसम अंग प्रश्नव्याकरण का यह अर्थ (जो आपने पूर्व में फरमाया) प्रकाशित किया तो हे भगवन्त ! ग्यारहवे अंग विपाक सूत्र का श्रमण भगवन्त महावीर देव यावत् मोक्ष पधारे ने क्या अर्थ फरमाया ? तब आर्य सुधर्म अणगार ने जम्बू अणगार को इस प्रकार कहा—इस तरह निश्चय करके हे जम्बू ! श्रमण भगवन्त यावत् मोक्ष को पधारे ने ग्यारहवें अंग विपाक सूत्र के दो श्रुतस्कध (ज्ञान के जत्थे) फरमाये; वे इस प्रकार हैं—१ दुःख विपाक २ सुख विपाक. हे भदन्त ! जो श्रमण भगवन्त यावत् मोक्ष को पधारे ने ग्यारहवें अंग विपाक सूत्र के दो श्रुत स्कंध फरमाये, तद्यथा—१ दुःख विपाक २ सुख विपाक तो हे प्रभो ! पहिले श्रुत स्कंध दुःख विपाक के कितने

अध्ययन फरमाये ? तब आर्य सुधर्म अणगार ने जम्बू अणगार को ऐसा कथन किया—इस प्रकार निश्चय करके हे जम्बू ! श्रमण भगवन्त धर्म के आदि कर्त्ता [अपने शासन में] तीर्थ के (चतुर्विधि संघ के) संस्थापक यावत् मोक्ष को पधारे उनने दुःख विपाक के दस अध्ययन फरमाये; वे ये हैं—

(१) मृगापुत्र (२) उज्झितक (३) अभग्न (४) शकट (५) बृहस्पतिदत्त (६) नन्दि (७) उम्बर (८) शौरिकदत्त ९ देवदत्त १० अंजू.

हे भदन्त ! श्रमण भगवन्त आदिकर्त्ता, तीर्थकर्त्ता, यावत् मोक्ष को पधारे हुए ने दुःख विपाक के दस अध्ययन फरमाये हैं. तद्यथा—१ मृगापुत्र, (यावत्) १० अंजू तो हे प्रभो ! दुःख विपाक के पहिले अध्ययन का श्रमण भगवन्त यावत् मोक्ष पधारे ने क्या अर्थ फरमाया ? तब उन सुधर्म मुनीश्वर ने जम्बू अणगार के प्रति इस प्रकार प्रकाशित किया—

टीकार्थ—'दुह विवागा' दुःख विपाकाः- पाप कर्मों के फल, दुखों के हेतुभूत होने से दुःखों के यानी पाप कर्मों के फलों का बयान जिसमे हो वह 'दुःख विपाक' कहा जाता है-वर्णानुसार न्याय से (अक्षरानुसार न्याय से-पाहिले दकार और पीछे सकार) दुःख विपाक पहिला श्रुतस्कन्ध और सुख विपाक दूसरा श्रुतस्कन्ध ग्रहण करना.

'मियउत्ते' इत्यादि गाथा का विशेपार्थ इस तरह है :— १ मृगापुत्र नाम के राज पुत्र के बयान से संकलित अध्ययन 'मृगापुत्र

मृगापुत्र नामका लड़का था, जन्म से अंधा, जन्म से गूंगा, जन्म से बहरा, जन्म से पांगुला, हुंडक संस्थान (गोल मोल गट्ट) वाला और वायु (वादी) की प्रकृति वाला था, उस राजपुत्र के हाथ, पैर, कान, आंख और नाक नहीं थे; उसके अंगोपांग की आकृति चिन्ह मात्र ही थी।

टीकार्थ—'एवं' इस प्रकार–कथन किये जाने वाले प्रकार से. 'खलु' वाक्य के अलंकार भूत है. 'सव्वोउय वण्णओ' सर्व ऋतुओं के पुष्पों से भरा हुआ नन्दन वनके समान, इत्यादि उद्यान का वर्णन करना. 'चिराइए' बहुत काल से शुरूआत है जिसकी इत्यादि वर्णन सहित कहना चाहिये; जिस तरह पूर्णभद्र चैत्य का बयान उववाई सूत्र में है. 'अहीण वण्णओ' अहीन यानी पूर्ण पंचेन्द्री वाला शरीर, वर्णन करना चाहिये. 'जाइ अंधे' जन्म काल से ही लेकर अंधा. 'हुंडे' हुंडक–शरीर के सर्व अवयव प्रमाण रहित यानी गोलमोल गट्ट. 'वायव्वे' जिसको वायु हो. 'आगई आगई मित्ते' अंग के अवयों की आकृति आकार मात्र थी; अथात् उचित स्वरूप नहीं था।

एक जन्मान्ध पुरुष प्रभु के निकट

मूल–तते णं सा मिया देवी तं मिया पुत्तं दारगं रहासियंसि भूमिघरंसि रहसएणं भत्तपाणे णं

पडिजागरमाणी २ विहरई, [सू० २] तत्थण मियग्गामे णगरे एगे ज़ातिअंधे पुरिसे परिवसइ, से णं एगेणं सचक्खु तेणं पुरिसेणं पुरओ दंडएणं पगढिज्जमाणे २ फुट्टहडाहडसीसे मच्छियाचडगर पहकरेणं अणिज्ज माणमग्गे मियग्गामे नयरे गेहे २ काल्लुण वडियाए वित्तिं कप्पेमाणे विहरइ। तेणं कालेणं तेणं समएणं समणं भगवं महावीरं जाव समोसरिए, जाव परिसा निग्गया तएणं से विजए खत्तिए इमिसे कहाए लद्धट्ठे समाणे जहा कोणिये तहा निग्गते, जाव पज्जुवासइ, तते णं से ज़ाइअंधे पुरिसे तं महया जणसद्दं जाव सुणेत्ता तं पुरिसं एवं वयासि— किन्नं देवाणुप्पिया ! अज्ज मियग्गामे णयरे इंदमहेइ वा जाव निग्गच्छई !, तते णं से पुरिसे तं जाइअंध पुरिसं एवं वयासि—

अर्थ—उस के बाद उस मृगादेवी ने उस मृगापुत्र लड़के को गुप्त तलघर (भोंयरा) में रक्खा, गुप्तपने आहार पानी से पोषण करने में सावधान होती हुई रहती थी—उस मृगाग्राम नगर में एक जन्मान्ध पुरुष रहता था, वह एक सूझते पुरुष द्वारा लकड़ी से आगे २ खिंचाता हुआ चलता था; उस के मस्तक के केश टूटे हुवे और अत्यन्त बिखरे हुवे थे, मक्खियों का विस्तार वाला समूह उसके मार्ग का साथी था यानी मक्खियाँ भिन भिनाती थीं; मृगाग्राम नगर के अन्दर घर २ पर दयामय आजीवका करता हुवा रहता था उस काल उस समय में श्रमण भगवन्त

"एवं खलु देवाणुप्पिया ! समणे भगवं महावीरे जाव इह समागते इह संपत्ते इहेव मियग्गामे णगरे मृगवणुजाणे अहापडिरूवं उग्गहं उग्गिण्हित्ता संजमेणं तवसा अप्पाणं भावे माणे विहरति" निश्चय कर के इस प्रकार हे देवानुप्रिय ! श्रमण भगवन्त महावीर यहां पर पधारे हैं, यहां सम्प्राप्त हुवे हैं, इस ही मृगाग्राम नगर के मृगवन नाम के उद्यान में यथाप्रतिरूप यानी त्यागी को शोभे वैसे अवग्रह को अवग्रहित करके संजम और तप से आत्म भावना करते हुवे विचरते हैं-इसलिये ये सब लोग जाते हैं-'विजयस्स तीसेय धम्म' इससे यह मालूम होता है-" विजयस्स रन्नो तीसेय महइ महालियाते परिसाए विवित्तं धम्म माइक्खइ जहा जीवा बज्झंति" विजय राजा के पास और बड़ी पर्षदा के सामने विविध प्रकार का धर्म कहा, जिस तरह जीव कर्मों को बांधते हैं-'जाइअंधे' जन्म से लेकर अन्धा ! वह तो चक्षुरोगादि से भी हो सकता है, इसलिये कहते हैं-'जाय अंधारुवे' शुरु से ही नेत्रों की उत्पत्ति नहीं होने से अंधापन उत्पन्न होगया है 'कुत्सिताङ्ग रूपं' घृणित है शरीर का रूप जिसका.

गौतम गणधर की मृगापुत्र देखने की अभिलाषा

मूल-तेणं कालेणं तेणं समएणं समणस्स जेट्टे अन्तेवासी इन्दभूति नामं अणगारे जाव विहरइ, तते णं

से भगवं गोयमे तं जाइअंध पुरिसं पासइ २ त्ता जायसड्ढे जाव एवं वयासी–अत्थिणं भंते ! केई पुरिसे जाति-अंधे जातिअंधारूवे ? हंता अत्थि; कहएणं भंते ! से पुरिसे जातिअंधे जातिअंधारूवे ? एवं खलु गोयमा ! इहेव मियग्गामे नगरे विजयस्स खत्तियस्स पुत्ते मियादेवीए अत्तए मियापुत्ते नामं दारए जातिअंधे जाति–अंधारूवे, नत्थिणं तस्स दारगस्स जाव आगातिमित्ते, तते णं सा मियादेवी जाव पडिजागामाणी २ विहरति। तते णं से भगवं गोयमे समणं भगवं महावीरं वंदइ नमंसति २ त्ता एवं वयासी–इच्छामिणं भंते ! अहं तुब्भे हिं अब्भणुन्नाए समाणे मियापुत्तं दारगं पासित्तए, अहासुहं देवाणुप्पिया ! तते णं–

अर्थ—उस काल उस समय में श्रमण भगवन्त के बड़े शिष्य इन्द्रभूति नाम के अनगार यावत् विचरते हैं, तब उन भगवान् गौतम ने उस जातिअंध पुरुष को देखा, देखकर श्रद्धा उत्पन्न हुई यानी पूछने की इच्छा उत्पन्न हुई यावत् इस प्रकार बोले–हे परमात्मन् ! कोइ पुरुष जन्मांध और कुत्सित अंगरूप नेत्र का अंधापन वाला होता है क्या ? भगवान् ने कहा–हां ! होता है; हे प्रभो ! वह किस तरह जातिअंध और जातिअंध रूपवाला होता है ? इस प्रकार निश्चय करके हे गौतम ! इस ही मृगाग्राम नगर के अन्दर विजय क्षत्री का पुत्र और मगादेवी का

रहित–ये क्रिया विशेषण में जानना–भ्रान्ति रहित धूसर प्रमाण * काय प्रमाण भूमिभाग जिसमें देखाजाय ऐसी दृष्टि से ईर्या समिति को शोधते पधारे. 'ईर्या' गमन तत्संबंधी मार्ग को भी ईर्या कहते हैं. 'जेणेव' जिस प्रदेश में 'हट्ठ जाव' हर्षित यावत् शब्द से हर्षित, तुष्टित, आनन्दित, इत्यादि ये शब्द एकार्थी समझना. 'हव्वति' शीघ्र.

मूल–सा मियादेवी मियापुत्तस्स दारगस्स अणुमग्ग जायते चत्तारिपुत्ते सव्वालंकार विभूसिए करेति २ त्ता भगवतो गोयमस्स पादेसु पाडेति २ त्ता एवं वयासी–एए णं भंते! मम पुत्ते पासह, तते णं से भगवं गोयमे मियादेवीं एवं वयासी–नोखलु देवाणुप्पिया! अहं एए तव पुत्ते पासिउं हव्वमागते, तत्थ णं जे से तव जेट्ठे मियापुत्ते दारऐ जाइअंधे जाइअंधारूवे जं णं तुमं रहस्सियंसी भूमिघरंसी रहस्सिएणं भत्तपाणे णं

* गाड़ी के जुड़े प्रमाण या शरीर प्रमाण को 'धूसर प्रमाण बोलते है–यहा पर यदि कोइ शंका करे कि देह प्रमाण यानी साड़ी तीन हाथ प्रमाण की नपति का क्या मालूम पड़े, क्या गज लेकर मापता जाय? उत्तर में विदित हो कि ज्ञानियों का अनुभव स्वयं माप का गज है! अपनी जमीन पर पड़ती हुई अन्तर रहित दृष्टि ठीक शरीर प्रमाण ही गिरती है, इस का अनुभव आज भी हो सकता है–इस 'ईर्या समिती' में बाह्य लाभ तो प्रत्यक्ष जीवों की रक्षा व अपनी निराबाधता दिखाई देती है, मगर आत्मिक एक महान् लाभ यह है कि दृष्टि का विषय कब्जे में होजाने से मानसिक विशुद्धता और मनोवेग मर्यादित हो जाता है, इसकी व्याख्या गुरुदेवों से जानना.

पडिजागरमाणी २ विहरासि तं णं अहं पासिउं हव्वमागए, तते णं सा मियादेवी भगवं गोयमं एवं वयासी–से केणं गोयमा ! से तहारूवे णाणी वा तवस्सी वा जेणं तव एसमट्ठे मम ताव रहस्सिकए तुब्भं हव्वमक्खाए जओ णं तुब्भे जाणह ! तते णं भगवं गोयमे मियादेवीं एवं वयासी–एवं खलु देवाणुप्पिया ! मम धम्मायरिए समणे भगवं महावीरे जतो णं अहं जाणामि, जावं च णं मियादेवी भगवया गोयमेण सद्धिं एयमट्ठं संलवति तावं च णं मियापुत्तस्स दारगस्स भत्तवेला जाया यावि होत्था; तते णं सा मियादेवी भगवं गोयमं एवं वयासी–

अर्थ—उस मृगादेवी ने मृगापुत्र लड़के के पीछे जन्मे हुवे चार पुत्रों को सर्व आभूषणों से भूषित किये, करके भगवान् गौतम के चरणों में झुकाये (नमाये) झुकाकर इस प्रकार बोली–अहो भगवन्त ! इन मेरे पुत्रों को देखो ! तब उन भगवान् गौतम ने मृगादेवी को इस क़दर कहा–निश्चय करके हे देवानुप्रिये ! मैं इन तुमारे पुत्रों को देखने के लिये शीघ्र नहीं आया हूँ; परन्तु जो वह तेरा बड़ा लड़का मृगापुत्र जातिअंध जातिअंधरूप, जिसको तुम बेजान तलघर में रखकर छुपे हुए आहार पानी से वारंवार पोषण करती हुई रहती हो, उस पुत्र को मैं शीघ्र देखने आया हूँ, तब वह मृगादेवी भगवान् गौतम को इस प्रकार कहती है–हे प्रभो ! वे कौन हैं ज्ञानी वा तपस्वी जिनने यह मेरी गुप्त हक़ीकत आपको शीघ्र कही ! जिससे आप जानते हो ! तब भगवान् गौतम ने मृगादेवी को इस तरह

यानी पूर्वभव में. 'दुश्चर्णानां' हिंसादि दुष्ट चरित्र के हेतुभूत. 'दुप्पडिकंताणं' यहां पर दुः शब्द अभाव अर्थ में है इससे प्रायश्चित की प्राप्ति वगैरा से उदय को निवृत्त नहीं किये हुवे, यह अर्थ समझना. 'असुभाणं' असुख के हेतुभूत. 'पावाणं' दुष्ट स्वभाव रूप 'कम्माणं' ज्ञानावर्णी आदि कर्मों को भोग रहा है।

भगवन्त से मृगापुत्र सम्बंधी वातचीत

मूल-एवं खलु अहं तुब्भेहिं अब्भुणुण्णाए समाणे मियग्गामं नगरं मज्झंमज्झेण अणुप्पविसामि जेणेव मियाए देवीए गेहे तेणेव उवागते, तते णं सा मियादेवी ममं एज्जमणं पासइ २ त्ता हट्ठा तं चेव सव्वं जाव पूयं च सोणियं च आहारेति, तते णं मम इमे अज्झत्थिए समुप्पज्जित्था-अहो णं ! इमे दारए पुरा० जाव विहरइ [सू० ४] से णं भंते ! पुरिसे पुव्वभवे के आसि ? [किं नामए वा किं गोए वा] कयरंसिग्गामंसि वा नयरं-

सि वा किं वा दच्चा किं वा भोच्चा किं वा समायरित्ता केसिं वा पुरा जाव विहरति? गोयमाइ समणे भगवं महावीरे भगवं गोयमं एवं वयासी—

अर्थ—इस प्रकार निश्चय करके मैं आप की आज्ञा प्राप्त कर मृगागाम नगर के बीचोंबीच प्रवेश करता हुवा जहां मृगादेवी का घर है वहां पहुँचा, तब मृगादेवी ने मुझे आता हुवा देखा, देखकर हर्षित हुई (मेरे को मृगा-पुत्र बताया) यावत् रसी और लोही का आहार करता है, यह सर्व हक़ीक़त कही; तदन्तर मुझे ऐसा विचार उत्पन्न हुवा—अहो इस लड़के ने पहिले (किन पाप कर्मों को बांधे हैं) यावत् रहता है. हे भगवन्त! यह पुरुष पूर्वभव में कौन था [क्या नाम व क्या गौत्र था?] किस गाम व किस नगर में रहता था? क्या दान देकर, क्या भोग भोग-कर, क्या आचरण करके, किस प्रकार पाहिले (पूर्व में पाप कर्मादि प्राप्त किये) यावत् रहता है? हे गौतम! इस प्रकार आमन्त्रण करके भगवन्त महावीर स्वामी ने गणधर गौतम को इस तरह फ़रमाया—

टीकार्थ—'पुव्व भवे के आसि' पूर्व भव में कौन था? इससे इस प्रकार जानना—"किं नामेए वा किं गोत्तए वा" नाम—जैसी इच्छा वैसा नाम, गौत्र—यथार्थ कुल. 'जाव' यावत् शब्द से "पोराणाणं, दुचिन्नाणं, दुपडिकंताणं असुहाणं पावाणं कम्माणं पावगं फल-वित्तिविसेसं पच्चणुब्भवमाणे विहरइ" + इसका अर्थ इकतीसवें पेज मे लिखा जा चुका है + 'गोयमाइ' गौतम! इस क़दर आमन्त्रण किया.

को देखता है यानी ग्रहण करने की बुद्धि से देखता है वह अधर्मप्रेक्षक समझना. इस ही लिये अधर्मप्ररञ्जनः- अधर्म का रागी है, इस से अधर्मसमुदाचारः-अधर्म की आचरणा है जिसकी सो अधर्माचारी जानना. अधर्म से यानी हिंसादि से वृत्ति करता हुवा यानी आजीविका करता हुवा; दुःशीलः- अच्छे स्वभाव से हीन. दुर्व्रतश्च-व्रतरहित. दुष्प्रत्यानन्दः-साधुदर्शनादि से आनन्दित नहीं, ऐसा वह राठोड़ था-'आहेवच्चं' अधिपतिकर्म, यावत् करण से ऐसा जानना-"पोरेवच्चं सामित्तं भट्टित्तं महत्तरगत्तं आणाइ सरसेणावच्चं कारेमाणे" इसमें पुरोवर्त्तित्वं-अग्रेसरपन. स्वामित्वं-नायकता. भर्तृत्वं-पोषकपन महत्तरकत्वं-उत्तमता. आज्ञेश्वरस्य-आज्ञा का प्रधान पन है जिस का ऐसे स्वामी का सेनापतित्व 'कारयन्-दूसरे नौकरों से कराता हुवा और आप पालता हुवा रहता है.

इक्काई राठोड़ का जुल्म

मूल—तए णं से इक्काई विजयवद्धमाणस्स खेडस्स पंच गाम सयाइं बहूहिं करेहि य भरेहि य विद्धीहि य उक्कोडाहि य पराभवेहि य दिज्जेहि य भेज्जेहीय कुंतेहि य लंछपोसेहि य आलीवणेहि य पंथ कोट्टेहि य उविलेमाणे २ विहम्मेमाणे २ तज्जेमाणे २ तालेमाणे २ निद्धणे करेमाणे २ विहरति ।

अर्थ— तदनन्तर वह इक्काई राठोड़ विजयवर्धमान खेड़े के पांच सो गामों को (गाम के लोगों को) बहुत करों से, करों की वृद्धि से, अधिक गुना बढ़ाने से, रिस्वत (लांच) से, दबाने से, ज्यादे व्याज लेने से, दंडद्रव्य से, देने की शर्त से, चोरों के पोषण से, ग्रामादि जलाने से, मुसाफ़िरों को मारपीट से, बाधा पहूँचाता हुवा, आचार भ्रष्ट कराता हुवा, तर्जना कराता हुवा (डराता हुवा) चाबुक, लपाट आदि से मारता हुवा और निर्धन करता हुवा रहता है.

टीकार्थ— 'करेहि य' करैः—खेत बग़ैरा की पैदाइस में राज को देने की वस्तुओ से. 'भरेहि य' करों की अधिकता से. 'विद्धीहि य' वृद्धिभिः—किसानो को दिया हुवा अनाज दुगुना-तिगुना लेने से; कहीं पर 'वृत्तिभिः' ऐसा भी उल्लेख है, वृत्तयः-राजा के नौकरों की आजिविका से. (किसानों के पास से अमुक कापा बग़ैरा आजिविका दिलाई जाती है) 'उक्कोडाहि य' लञ्चाभिः-रिस्वतों से 'पराभएहि य' पराभवैः-दबाने से 'देज्जेहि य' दातव्यैः-देनदार से ज्यादे व्याज लेने से. 'भेज्जेहि य' भेद्यैः-मारामारी के अपराध में गाम के लोगों पर जो दण्डद्रव्य डालने में आता है; अथवा कास्तकारों के पास से जो दंडद्रव्य लिया जाता है उससे. 'कुंतेहि य' कुन्तकम्-इतना धन तूं मुझे देना इस शर्त्त से नौकर को देश बग़ैरा देने से. 'लंछपोसेहि य' लञ्छपोषाः-चौर लोग संभवते हैं उनका पोषण करने से. 'आलीवणेहि य' व्याकुल लोगों को ठगने के लिये गाम बग़ैरा जला देने से. 'पंथकोट्टेहि य' सार्थघातैः- रास्तागिरों को मारने से. 'उवीलेमाणे' अवपीलयन्-बाधा-पीड़ा पहूँचाता हुवा. 'विहम्मेमाणे' विधर्मयन्-अपने आचारो से भ्रष्ट कराता हुवा 'तज्जमाणे' तर्जयन्-तिरस्कार करता हुवा यानी आश्रितो को ऐसा कहे-रे! मेरी यह चीज़ नही देता है याद रखना, तूं ? इस तरह डराता हुवा. 'तालेमाणे' ताड़यन्-चाबुक, चपेटा से मारता हुवा. 'निद्धणे-करेमाणे' निर्धनान् कुर्वन्-निर्धन करता हुवा रहता है.

यंका पाउब्भूया. तंजहा—

१ सासे २ कासे ३ जरे ४ दाहे। ५ कुच्छिसूले ६ भंगदरे ॥ ७ अरिसा ८ अजीरए ९ दिट्ठी।

१० मुद्धसूले ११ अकारए ॥१॥ १२ अच्छिवेयणा १३ कन्नवेयणा १४ कंडू १५ उदरे १६ कोढे.

तते णं से इक्काई रट्ठकूडे सोलसहिं रोगायंकेहिं अभिभूए समाणे कोडुंबिय पुरिसे सद्दावेइ २ त्ता एवं वयासी—

अर्थ—तत्पश्चात् उस इक्काई राठोड़ के किसी एक वख्त शरीर के अन्दर एक साथ सोलह रोगातङ्क (कष्ट साध्यरोग) उत्पन्न हुवे. तद्यथा—

१ श्वास २ कास (खांसी) ३ ज्वर (बुखार) ४ दाह ५ उदरशूल ६ भंगदर ७ अर्स (मसा) ८ अजीर्ण ९ नेत्र रोग १० मस्तक शूल ११ अरुचि १२ हड्डी का रोग १३ कर्णवेदना १४ खुजली १५ जलोदर १६ कोढ.

तदनन्तर उस इक्काई राठोड़ सोलह रोगातङ्क से पराभव होते हुवे ने कौटुम्बिक पुरुषों को (सेवकों को) बुलाए, बुलाकर इस प्रकार कहा—

टीकार्थ—'जमगसमगं' युगपत्–एक साथ. 'रोगायंक' रोगाः–व्याधियाँ, वे ही आतङ्काः–कष्ट जीवन करने वाले. 'सासे' वगैरा गाथानुसार जानना: 'जोणिसूले' योनिशूल' पाठ में नहीं है. 'कुच्छिशूले' कुक्षिशूलः–पेटपीड़ा. 'भगंदले' भगंन्दर 'अकारेए' अरोचकः—

अरुचिकर 'अच्छिवेयणा' इत्यादि श्लोक से पृथक् है 'उदरे' जलोदर.

मूल—गच्छह णं तुब्भे देवाणुप्पिया ! विजयवद्धमाणे खेडे संघाडगातिगचउक्कचच्चरमहापहपहेसु महया २ सद्देणं उग्घोसेमाणा २ एवं वदह–इहं खलु देवाणुप्पिया ! इक्काई रट्ठकूडस्स सरीरगंसी सोलस रोगायंका पाउब्भूया, तंजहा–१ सासे २ कासे ३ जरे जाव १६ कोढे, तं जो णं इच्छति देवाणुप्पिया ! विज्जो वा विज्जपुत्तो वा जाणुओ वा जाणुयपुत्तो वा तेगिच्छी वा तेगिच्छीपुत्तो वा इक्काई रट्ठकूडस्स तेसिं सोलस–ण्हं रोगायंकाणं एगमवि रोगायंकं उवसामित्तए तस्स णं इक्काई रट्ठकूडे विपुलं अत्थसंपयाणं दलयति, दोच्चं पि तच्चंपि उग्घोसेह २ त्ता एयमाणत्तियं पच्चप्पिणह ।

अर्थ—अहो देवानुप्रिय! तुम जाओ और विजयवर्धमान खेड़े के शृंगाटक में (सिंगोड़े के आकरवाले मार्ग में) त्रिक में (जहां तीन रास्ते मिलते हों) चतुष्क में (जहां चार मार्ग मिलते हों) चत्वर में (चोहट्टे में) महापथ में (राजमार्ग में–जहां बहुत लोगों का आना जाना हो) पथ में (सामान्य मार्ग में–जहां कम लोगों का आना जाना हो) बड़े २ शब्दों में यानी जोर २ से उद्घोषणा करते हुवे ऐसा कहो–यहां पर (इस गाम में) निश्चय करके हे देवानुप्रिय ! इक्काई राठोड़ के शरीर में सोलह दुर्निवार रोग उत्पन्न हुवे हैं, वे ये हैं–१ स्वास २ खास ३ ज्वर यावत् १६

अर्थ—इक्काई राठोड़ के शरीर को स्पर्श किया यानी परीक्षा की, परीक्षा करके उन रोगों का निदान (निर्णय) परस्पर पूछा, पूछकर इक्काई राठोड़ को अभ्यंग से [तैल चोलने से] उद्वर्तन से [तैल को बाहार निकाल ने से] उकाले से [सुंठ वगैरा के पानी पिलाने से] वमन से [उल्टी से] विरेचन से [दस्तों लगाने से] अवदहन से [डाम देने से] अवस्नान से [तथा प्रकार की औपधियों मिश्रित जल द्वारा स्नान कराने से] अनुवासना से [गुदाद्वारा पेट में तैल चढ़ाने से] वस्तिकर्म से [गुदा में वत्ती चढाने से वा चमड़े की डोरी बांट कर मस्तकादि अवयवों में तैल डालने से] निरुह से [अनुवासना वत्] × शिरा वेध से [नसों को वींदने से] तक्षण से [क्षुरादि शस्त्र द्वारा चमड़ी काटने से] प्रक्षण से [किंचित् चमड़ी काटने से] शिरोवस्ति से [मस्तक पर चमड़े की डोरी बांधकर उसमें औपधियों से मिला हुवा तैल डालने से] ❀ तर्पण से [तैलादि द्वारा शरीर की पुष्टि करने से] पुटपाक से (भट्टी में डाली हुई पुट देकर तैयार की हुई औपधी से] छाल से [रोहिणी वगैरा छाल से] मूल से [वृक्ष की जड़ों से] कन्द से [जमीकन्द से] पत्र से [वृक्ष के पान से] पुष्प से [फूलों से] फल से [वृक्ष के फलों से] बीज से [नानाविध बीजों से] शिलिका से [किरात तिक्तक औपधि विशेप से] गुटिका से [गोलियां से] औपधि से [एक चीज की बनी हुई

× अनुवासना और निरुह में मात्र औपधियों का तफावत है।

❀ ऊपर कहा हुवा 'वस्ती कर्म' सामान्य है, और "अनुवासना, निरुह तथा शिरोवस्ति" ये तीन इस ही के भेद है।

दवाई से] भेषज से [अनेक चीजों से बनी हुइ दवाई से] इन दवाईयों से उन सोलह रोगों में से एक रोग भी शमन होजाय, ऐसा उनने इच्छा करी यानी प्रयत्न किया; परन्तु वे उपशान्त करने को समर्थ न हुवे. तदनन्तर वे बहुत से वैद्य-वैद्यपुत्र वगैरा सब उन सोलह रोगों में से एक भी रोग शान्त करने का समर्थ न हुवे तब शरीर से, मन से और दोनों से खेद प्राप्तकर जिस दिशा से प्रगट हुवे थे (आये थे) उस दिशा में वापिस चले गये.

टीकार्थ— 'तच्छणेहि य' ओजार द्वारा चमड़ी पतली करने से. 'पच्छणेहि य' छोटी २ चमडियों को काटडालने से. 'भेषज्जेहि य' अनेक वस्तुओं के योग से तैयार हुई और पथ्य. 'संत' श्रान्ताः-शरीर के खेद से थके हुवे. 'तंत' तान्ता-मन के दुःख से. परितन्तः-शरीर और मन दोनों श्रम से—टीका के बहुत से शब्दो के अर्थ मूल के अर्थ में आगये हैं, अतः यहां पर नहीं लिखे गये।

इक्काई राठोड़ की अन्तिम अवस्था

मूल—तते णं इक्काई रट्ठकूडे विज्जेहि य ६ (विजापुत्ते य जाव तेगिच्छपुत्तो य) पडियाइक्खिए परियारगपरिचत्ते निविण्णोसहभेसज्जे सोलस रोगायंकेहिं अभिभूए समाणे रज्जे य रट्ठे य जाव अंतेउरे य मुच्छिए रज्जे

कालसमयंसि कुडुंवजागरियाए जागरमाणिए इमे एयारूवे अज्झत्थिए जाव समुप्पज्जित्था-एवं खलु अहं विजयस्स खत्तियस्स पुव्विं इट्टा ६ धेज्जा वेसासिया अणुमया आसी, जप्पभिइं च णं मम इमे गब्भे कुच्छिंसि गब्भत्ताए उववन्ने तप्पभिइं च णं अहं विजयस्स खत्तियस्स अणिट्ठा जाव अमणामा जाया यावि होत्था, निच्छति णं विजए खत्तिए मम नामं वा गोयं वा गिण्हित्तए वा किमंग पुण दस्सणं वा परिभोगं वा १ तं सेयं खलु-

अर्थ—तव उस मृगादेवी के शरीर में वेदनाएँ उत्पन्न हुई-उज्वल यावत् ज्वलन्त वेदना प्रकट हुई, जव से मृगापुत्र लड़का मृगादेवी की कूक्षि में गर्भपने उत्पन्न हुवा, तव से मृगादेवी विजयक्षत्री को अनिष्टा हुई, अमनोहरा हुई, अप्रिया हुई, अरुचिकरा हुई, अस्मृता (स्मरण में नहीं आती) हुई, तदा उस मृगादेवी को किसी एक दिन मध्यरात्री के समय कुटुम्ब चिन्ता में (विचारणा मे) जागृत रहती को इस प्रकार आत्म संवंधी विचार यावत् उत्पन्न हुवा-निश्चय करके इस प्रकार विजयक्षत्री को पूर्व में मैं इष्टा थी ६ [मनोहरादि छः पद] ध्येया, विश्वसनीया और अनुमता थी; जव से मेरा यह गर्भ कूक्षि में गर्भपने उत्पन्न हुवा है तव से मैं विजयक्षत्री को अनिष्टा यावत् अस्मृता हुई. विजयक्षत्री मेरे नाम और गौत्र को ग्रहण करना, नहीं इच्छते हैं. तो फिर मुझे देखने या भोगने की तो वात ही क्या है? इसलिये—

टीकार्थ— 'पुव्वरत्तावरत्तकालसमयंसि' पूर्वरात्री [रात्री का पूर्वभाग] अपररात्री [रात्री का पिछला भाग] का भाग, उस लक्षण वाला जो काल समय यानी कालरूप समय. 'कुडुंब जागरियाए' कुटुम्ब विचारणा से. 'अज्झत्थिए' आध्यात्मिकः-निज संबंधी. यहां पर दूसरे २ पद भी दिखाई देते हैं, वे ये हैं-'चिंतिए' स्मृतिरूपः-स्मरणरूप. 'कप्पिए' कल्पितः-बुद्धि से व्यवस्थित. 'पत्थिए' प्रार्थितः-प्रार्थनारूप. 'मणोगए' मनोगतः-मन के अन्दर रहे हुवे बाहार अप्रकाशित. संकल्पः-आलोचित यानी विचार किया हुवा. 'इट्ठे' इष्टा, इत्यादि पाँचो शब्द एकार्थी पूर्ववत् जानना. 'धिज्जे' ध्येया-ध्याने योग्य. 'वेसासिय' विश्वसनीया-विश्वासकरने लायक. 'अणुमय' अनुमता-अप्रियदर्शन का पीछे से भी मान्य हो. 'नामं' पारिभाषिकी संज्ञा-अर्थरहित पहिचान. 'गोयं' गोत्रं-अर्थवाली संज्ञा यानी पहिचान. 'किमंग पुण' किं पुनः-फिर क्या ? अंग शब्द आमन्त्रण में है.

गर्भ को नष्ट करने के निष्फल उपाय

मूलः—से यं खलु मम एयं गब्भं बहूहिं गब्भ साडणाहि य पाडणाहि य गालणाहि य मारणाहि

'टीकार्थ—'अट्ठनालीओ' अष्टौनाड्यः-आठ नाड़ियाँ. 'अब्भितरप्पवहाउ' शरीर के अन्दर ही जो रुधिरादि बहाती हैं वे उस प्रकार कही जाती हैं. 'बाहिरप्पवहाउ' शरीर से बाहार रसी आदि जो झराती हैं वे उस तरह कही गईं-इन ही सोलह नाड़ियों को विभक्त (वेंचना) करते हैं. 'अट्ठ' इत्यादि किस तरह ये हैं कहते हैं-'दुवे दुवे' दो मवाद प्रवाह करनेवाली, दो रुधिर प्रवाह करनेवाली; वे कौनसी हैं सो बताते हैं-'कन्नंतरेसु' कानों के छिद्रों में; इस तरह ये चार. इस प्रकार दूसरी भी व्याख्या के योग्य है, विशेष में धमन्यः-कोठे के हाड़ों में. 'अग्गियए' अग्निकः-भस्मक नाम का वायुविकार होगया.



पुत्र को फिकवा देने का यत्न



मूल—तते णं सा मियादेवी अन्नया कयाइं नवण्हं मासाणं बहुपड़िपुन्ना णं दारगं पयाया, जातिअंधे जाव आगइमित्ते, तते णं सा मियादेवी तं दारगं हुंडं अंधारूवं पासति २ त्ता भीया (तत्था उव्विग्गा, संजाय भया) ४ अम्माधाई सद्दावेति २ त्ता एवं वयासी—गच्छह णं देवाणुप्पिया ! तुमं एवं दारगं एगंते उक्कु-

रुडियाए उज्झाहि, तते णं सा अम्मधाई मियादेवीए तहत्ति, एयमट्ठं पडिसुणेति २ त्ता जेणेव विजयखत्तिए तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता करयलपरिग्गहियं एवं वयासी –

अर्थ—तदनन्तर उस मृगादेवी ने नव मास प्रतिपूर्ण होने पर पुत्र को जन्म दिया, जन्मान्ध यावत् आकृतिमात्र था, तब उस मृगादेवी ने उस लड़के को हुंड (गोलमोल) और अंधरूप देखा, देखकर डरी, त्रास को प्राप्त हुई, उद्वेग पाई और उस को भय उत्पन्न हुवा, इससे धात्रीमाता (धाई मां) को बुलाई, बुलाकर इस प्रकार कहा–हे देवानुप्रिये! तुम जाओ इस लड़के को एकान्त उकेड़े पर डाल दो, पश्चात् उस धाइमाता ने प्रमाण वचन ऐसा कहा, इस बात को सुनी सुनकरके जहां विजयक्षत्री (राजा) है वहां पर आती है, आकर हाथ जोड़कर इस प्रकार बोली–

टीकार्थ—'जाइअँधे' जात्यन्धः–जन्मान्ध. वगैरा, यावत् करण से 'जाइमूए' जातिमूकः–जन्म गूँगा, इत्यादि जानना. 'हुंडं' अंग के अवयव व्यवस्थित नहीं. 'अंधारूवं' अन्धाकृतिः–अंधस्वरूप. 'भीया' भीता–डरी; इससे यहां पर ऐसा जानना. 'तत्था उव्विग्गा संजयभया' त्रासा उद्विग्ना संजातभया–भय की अधिकता बताने के लिये ये सब एकार्थी शब्द हैं. 'करयले' इससे–"करयल परिग्गहियं दसणहं मत्थए अंजलिं कट्टु" दोनों हथेली इक्खटीकर दस अंगुलियाँ मस्तक पर चढाकर यानी दोनों हाथ जोड़कर, ऐसा जानना. 'नवण्हं' इससे 'मासाणं बहुपडिपुन्नाणं' नव मास सम्पूर्ण. 'जाइअंध' इत्यादि पूर्ववत्.

प्रमाण कर विनयपूर्वक अङ्गीकार किया, अङ्गीकार करके उस लड़के को गुप्त भूमिगृह में गुप्तपने आहार-पानी से पोषण करती हुई रहती है. इस तरह निश्चय करके हे गौतम! मृगापुत्र नाम का लड़का पहिले बांधे हुवे पुराने यावत् फल को भोगता हुवा रहता है।

टीकार्थ—'पयं' प्रजा-सन्तान 'रहस्सियंसि' राहसिके-निर्जनस्थान में. 'पुरापोराणाणं' पुरापुराणानां-पूर्वकाल में किये हुवे इस ही लिये प्राचीन कालके; यहां पर यावत् करण से 'दुचिन्नाणं दुप्पडिकंताणं' दुष्टरिति से आचरित और प्रतिक्रमण नहीं किये हुवे (त्याग नही किये हुवे) इत्यादि. 'पावगं फलवित्तिविसेसं' पाप कर्म के फल को भोगता हुवा रहता है; ऐसा जानना.

मृगापुत्र के लिये गौतम गणधर की भावी पृच्छा

मूल—मियापुत्ते णं भंते! दारए इओ कालमासे कालं किच्चा कहिं गमाहिति? कहिं उववज्जिहिति? गोयमा! मियापुत्ते दारए छव्वीसं वासाइं परमाउयं पालइत्ता कालमासे कालं किच्चा इहेव जम्बूद्दीवे दीवे

अर्थ—हे भगवन्त ! मृगापुत्र सुत यहां से कालमास में काल करके कहां जायगा ? कहा उत्पन्न होगा ? भगवान् ने फ़रमाया–हे गौतम ! मृगापुत्र लड़का छवीस वर्ष की उत्कृष्ट आयुष्य पालकर कालमास में काल करके (मृत्यु के समय मरकर) इस ही जम्बूद्वीप नाम के द्वीप के अन्दर भरत क्षेत्र में वैताढ्यपर्वत की तलेटी में सिंह के कुल में सिंहपने उत्पन्न होगा; अर्थात् वह वहां पर सिंह होगा, अधर्मी यावत् साहसिक होगा, बहुतसा पाप उपार्जन करेगा, उपार्जन करके कालमास में काल कर के–

टीकार्थ—'अहम्मिए' अधर्मी, यावत् करण से ऐसा जानना –"बहुनगरनिग्गयजसे सूरे दढप्पहारी" बहुतसे नगर को उजड़ करने में सूरवीर और दृढप्रहारी. 'कालमासे' मरणावसरे–मृत्यु के समय.

मूल—इमिसे रयणप्पभाए पुढवीए उक्कोस सागरोवमठिइएसु जाव उववज्जिहिति, सेणं ततो अणतरं उव्वट्टित्ता सरीसवेसु उववज्जिहिति, तत्थ णं कालं किच्चा दोच्चाए पुढवीए उक्कोसेणं तिन्नि सागरोवमाइं, से णं ततो अणंतरं उव्वट्टित्ता पक्खीसु उव्वज्जिहिति, तत्थ वि कालं किच्चा तच्चाए पुढवीए सत्त सागरोवमाइं, से णं ततो तयाणन्तरं सीहेसु य चोत्थीए०, उरगो पंचमी०, इत्थि छट्ठी, मणुआ० अहे सत्तमाण, ततो अणंतरं उव्वट्टित्ता–

मूल—सुपइट्ठपुरे नगरे गोणत्ताए पच्चायाहिंति, से णं तत्थउमुक्क जाव बालभावे, अन्नयाकयाइं पढमपाउसंसि गंगाए महाणईए खलीय मट्टियं खणमाणे तडिए पेल्लिए समाणे कालगए तत्थेव सुपइट्ठेपुरे नगरे सेट्ठिकुलंसि पुमत्ताए पच्चायाइस्संति, से णं तत्थ उमुक्क बालभावे जाव जोव्वणगमणुपत्ते तहारुवाण थेराणं अंतिए धम्मसोच्चा निसम्म मुंडेभवित्ता आगाराओ अणगारियं पव्वइस्सति, से णं तत्थ अणगारे भविस्सति ईरियासमिए जाव बंभयारी—

अर्थ—सुप्रतिष्ठितपुर नगर के अन्दर गोपने (सांढपने) उत्पन्न होगा, वहां वह बाल्यावस्था से मुक्त होकर यावत् (युवा अवस्था) में प्राप्त होगा, किसी एक वख्त पहली वर्षाऋतु में गंगा नाम की महानदी के किनारे पर भेखड़ की मिट्टी खोदते हुवे वह भेखड़ उस पर गिरने से कालशरण होकर वहीं पर यानी सुप्रतिष्टान नगर के अन्दर सेठ के कुल में पुत्रपने उत्पन्न होगा, वह वहां पर बालचेष्टा से मुक्त होकर यावत् जवान अवस्था में प्रवेश करेगा तब तथारूप मुनि (चाहिये वैसा साधुपन) के पास धर्म सुनेगा, सुनकर मुंडित हो गृहस्थाश्रम से अनगार रूप दीक्षा अङ्गीकार करेगा यानी गृहत्यागी साधु होगा वह ईर्यासमिति पालता हुवा यावत् बालब्रह्मचारी होगा.

टीकार्थ—'खलीणमट्टीय' उपर रही हुई—टूटे हुवे किनारे पर रही हुई मिट्टी. 'उमुक्क जाव' बालभाव से मुक्त होगया है,

यावत् करण से "उम्मुक्कवालभाव विन्नयपरिणयमेत्ते जोव्वणगमणुपत्ते" एसा देखाजाता है. उसमें–विज्ञः यानी विशेष जानने वाला कप्रत्यय एव अर्थ में आकर 'विज्ञकः' शब्द बना; अर्थात् विज्ञक अवस्था में परिणत यानी बुद्धि आदि परिणाम से युक्त–विज्ञक परिणाम–मात्र से सम्पन्न, इसे मुक्तवालभाव कहते हैं।

पारमेश्वरी दीक्षा और मोक्ष का निर्णय

मूल–से णं तत्थ बहूइं वासाइं सामन्नपरियाइं पाउणित्ता आलोइय पडिक्कंते समाहिपत्ते कालमासे कालं किच्चा सोहम्मे कप्पे देवत्ताए उववज्जिहिति, सेणं ततो अणंतरं चयं चइत्ता महाविदेहे वासे जाइं कुलाइं भवंति अड्ढाइं जहा दढपइन्ने सा चेव वत्तव्वया कलाओ जाव सिज्झिहिति एवं खलु जम्बू ! समणेणं भगवया महा–वीरेणं जाव संपत्तेणं दुहविवागा णं पढमस्स अज्झयणस्स अयमट्ठे पन्नत्ते त्तिबेमि (७) ॥ १ ॥




वीरधर्मो विजयते.



❀ दूसरा अध्ययन ❀

(उज्झितक)

मूल— जइ णं भंते! समणे णं जाव संपत्ते णं दुहविवागाणं पढमस्स अज्झयणस्स अयमट्ठे पन्नत्ते, दोच्चस्स णं भंते ! अज्झयणस्स दुहविवागाणं समणे णं जाव संपत्ते णं के अट्ठे पन्नत्ते ?, तते णं से सुहम्मे अण– गारे जम्बूं अणगारं एवं वयासी–एवं खलु जंबू ! तेणं कालेणं तेणं समएणं वाणियगामे नामं नयरे होत्था, रिद्धित्थिमियसमिद्धे, तस्स णं वाणियगामस्स उत्तरपुरच्छिमे दिसीभाए दूईपलासे नामं उज्जाणे होत्था, तत्थ णं दूईपलासे सुहम्मस्स जक्खस्स जक्खायणे होत्था, तत्थ णं वाणियगामे मित्ते नामं राया होत्था, वण्णओ, तस्स णं मित्तस्सरन्नो सिरीनामं देवी होत्था, वण्णओ, तत्थ णं–

अर्थ— "जम्बू स्वामी ने स्वधर्म स्वामी गणधर अपने पूज्य गुरुदेव को पूछा" हे भगवन् ! जो श्रमण यावत् (भगवन्त महावीर ने) मोक्ष को प्राप्त हुवे ने दुःखविपाक के प्रथम अध्ययन का यह अर्थ (जो आप पूज्य श्री ने ऊपर

जानने योग्य है. 'छट्ठं छट्ठेण जहा पन्नत्तीए' जिस तरह भगवती सूत्र में है वैसा यहाँ कहना "छट्ठं छट्ठेणं अणिक्खित्तेणं तवोकम्मेण अप्पाणं भावेमाणे विहरति, तएणं से भगवं गोयमे छट्ठपक्खमण पारणगंसी" अन्तर रहित छट २ के तपकर्म से आत्म भावना करते हुवे रहते हैं, तदा वे भगवान् गौतम छट क्षमण के (बेले के) पारणे के दिन "पढम" यहां पर यावत् करण से ऐसा देखा जाता है—"पढमाए पोरसीए सज्झायं करेति बीयाए पोरसीए झाणं झियाति तइयाए पोरसीए अतुरियमचवलममंभते मुहपोत्तियं पाडिलेहेइ भायणवत्थाइं पड़िलेहेइ भायणाणि पम्मज्जति भायणाणि उग्गाहेइ जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणामेव उवागच्छति २ त्ता समणं भगवं महावीरं वंदइ नमंसइ २ त्ता एवं वयासि-इच्छामि णं भंते! तुज्झेहिं अब्भणुण्णाए समाणे छट्ठक्खमणपारणगंसि वाणियगामे णगरे उच्चनीयमज्झिमकुलाइं घरसमुदाणस्स भिक्खायरियाए अडित्तए-अहासुहं देवाणुप्पिय मापडिबंधं-तए णं भगवं गोयमे समणे णं ३ अब्भणुन्नाते समाणे समणस्स ३ अंतियाओ पडिनिक्खमति अतुरियमचवलमसंमंते जुगंतरप्पलोयणाए दिट्ठीएपुरओरियं सोहेमाणे" पहिली पहर में सज्झाय (स्वाध्याय) करते थे, दूसरी पहर में ध्यान (अर्थ चिंतन) करते थे, तीसरी पहर में काया और मन की चपलता रहित तथा भ्रान्ति रहित मुहपत्ति का पडिलेहण करते है, बाद भाजन-वस्त्र (झोली-पड़ला) पड़िलेहण करते हैं, भोजन के भाजन को (पात्रों को) प्रमार्जन (पूंजन) करते है, भाजन को लेकर जहां पर श्रमण भगवन्त महावीर देव है वहां पर आते हैं, आकर के श्रमण भगवन्त महावीरदेव को वन्दन-नमस्कार करते हैं, करके इस प्रकार बोले-हे भगवन्त! आपकी आज्ञा प्राप्त कर के छट्ठ-

क्खमणतप पारणे के लिये वाणिज गाम नगर में ऊँच-नीच और मध्यम * घरों में भिक्षा के वास्ते भ्रमण करना मैं इच्छता हूँ ? भगवन्त ने फ़रमाया-हे देवानुप्रिय ! जैसा सुख हो वैसा करो ! स्खलना मत करो, तब भगवान् गौतम श्रमण भगवन्त महावीर देव की आज्ञा प्राप्त कर इन के पास से रवाना होते हैं, काया-मन की चपलता रहित और अभ्रान्त दृष्टि से धूसर प्रमाण जमीन आगे आगे शोधते चलते हैं ।

गणधर महाराज एक अद्भुत करुणाजनक दृश्य देखते हैं

मूल—उच्चनीय अडमाणे जेणेव रायमग्गे तेणेव ओगाढे तत्थ णं बहवे हत्थी पासइ सन्नद्धबद्धवम्मियगु- डियउप्पीलियकच्छे उद्दामियघंटे णाणामणिरयणविविहगेविज्ज उत्तरकंचुइज्जे पडिकप्पिए झयपडागवर पंचामेल आरूढ हत्थारोहे गहिया उहप्पहरणे अन्ने य तत्थ बहवे आसे पासति-सन्नद्ध बद्ध-वम्मियगुडिएआविद्ध गुडिओसारियपक्खरे उत्तरकंचुइयओचूलमुहचंडाधर चामरथासकपरिमंडियकडिए आरूढ आसारोहे गहिया

* उच्च कर्मवाला 'उच्च' मध्यमकर्म वाला 'मध्यम' और नीच कर्म वाला 'नीच' कुल का समझना-यहां पर कर्म शब्द का अर्थ कर्तव्य जानना. जाति के साथ ऊँच-नीचादि का सम्बंध शास्त्र सम्मत नहीं है.

'सन्नद्धवद्धवम्मियगुडिए' ऊपर लिखे अनुसार व्याख्या जानना. 'आविद्धगुडे ओसारियपक्खरे' आविद्धा–डाले हुवे थे गुडा (झूल) नाम के उपगरण जिन्हो के, ये उपगरण यद्यपि हाथियो के अङ्गरक्षा करने में रूढ हैं. तथापि अमुक देशोंकी अपेक्षा घोड़ों के भी संभवते है. अवसारिता पक्खरा–धारण किये हैं पाखर (शरीर के रक्षक अमुक उपगरण) जिन्होने ऐसे वे घोड़े, उत्तरकंचुइय–ओचूलमुह चंडाधर चामर थासगयरियमंडियकाडिये' उत्तर कञ्चुकः–शरीर के रक्षक विषेश उपगरण (पलाण) कसे हुवे थे जिन्होंके. चोकड़ों से मुख प्रचण्डता को धारण करते थे अर्थात् होठ भयङ्कर दिखाई देते थे जिन्हों के; तथा चामरों से और काचखण्डों से शोभित थे कटिभाग जिनके; ऐसे वे अश्व थे।

'उप्पिलियसरासणपट्टीए' उत्पिडिता–की है (लगाई गई है) प्रत्यञ्चा यानी डोरियां जिन पर ऐसे, शरासन पाट्टिका–धनुप अथवा भुजा पाट्टिकाएँ धारण की हैं जिन्होने ऐसे वे सुभट पुरुप थे. 'पिणिद्धगोविज्ज' पिनद्धं– धारण किये हैं कण्ठाभूषण जिन्होंने. 'विमलवरवद्ध चिंधपट्टे' निर्मल उत्तम बांधे हैं चिन्हपट (कमरपट्टे) जिन्होने; ऐसे वे पुरुप थे.

मूल–अवउडगवंधणं उक्कित्तकन्ननासं नेहतुप्पियगत्तं वज्झकक्खडियजुयनियत्थं कंठेगुणरत्त मल्लदामं चुण्णगुंडियगत्तं चुण्णयं वज्झपाणपीयं तिलंतिलं चेव छिज्जमाणं काकणी मंसाइं खावियं तं पावं खक्खरगस एहिं हम्ममाणं अणेगनरनारी संपरिवुडं चच्चरे चच्चरे खंडपडहराणं उग्घोसिज्जमाणं, इमं च णं एयारूवं उग्घोसणं

पडिसुणेति—नो खलु देवाणुप्पिया ! उज्झियगस्स दारगस्स केइ राया वा रायपुत्तो वा अवरज्झइ अप्पणो से सयाइं कम्माइं अवरज्झन्ति (सू० ९)

अर्थ—अत्यन्त नीचा मुख रख कर पीठ के भाग से बंधा हुवा था, कान और नाक जिसके कटे हुवे थे, तैल लगाने से या पसीने से चीकना था शरीर जिसका, मारने योग्य होने से उसके दोनों हाथ कमर में बंधे हुवे थे, उसके कण्ठ में डोरे के जैसी लाल पुष्पों (कणेर के पुष्पों) की माला पहनाई गई थी, गेरु के चूर्ण से शरीर रंगा हुवा था जिसका ऐसा वह पुरुष, उसका हृदय चूर २ हो रहा था, बाह्यप्राण यानी श्वासोच्छास जिसको प्रिय थे, अर्थात् मरने में नाखुश था, तिल २ जितने काटे हुवे उसके शरीर के मांस के टुकड़े उसको खिलाये जाते थे, वह अत्यन्त पापी था, सैकड़ों चाबुक उसके लगाये जारहे थे, अनेक नर-नारियाँ जिसके चोतर्फ घिरी हुई थीं, चोहट्टे २ यानी प्रत्येक मार्ग पर फूटे हुवे पटह (ढोल) से उद्घोषणा (ढंढेरा) हो रही थी, यह इस प्रकार की आघोषणा उन्होंने (गौतमस्वामीने) सुनी—अहो देवानुप्रियाः ! निश्चय करके इस उज्झितक लड़के का किसी राजा या राजपुत्र ने बिगाड़ किया नहीं; परन्तु अपने किये हुवे कर्मोंका ही बिगाड़ है यानी दोष है।

टीकार्थ—'अवउडग बंधणं' अवकोटकेन बंधनं-पीठ अधोनयन से बंधित है जिसकी उसको देखा. 'उक्खित्तकन्ननासं' उखाड़ दिये हैं कान और नाक जिसके. 'नेहतुप्पियगतं' स्नेहस्नेहितशरीरं-चिकनाससे चिकना हुवा है शरीर जिसका. 'बज्झकक्खडियजुय

भगवन्त से करुणाजनक दृश्य की पृच्छा
उज्झितक का पूर्व भव

मूल—एवं खलु अहं भंते ! तुज्झेहिं अब्भणुन्नाए समाणे वाणियगामं जाव तहेव वेदेति, से णं भंते ! पुरिसे पुव्वभवे के आसी ? जाव पच्चणुब्भवमाणे विहरति ? एवं खलु गोयमा ! तणं कालेणं तेणं समएणं इहेव जंबुद्दीवे २ भारहे वासे हत्थिणाउरे नामं नगरे होत्था, रिद्ध०, तत्थ णं हत्थिणाउरे नगरे सुनंदे नामं राया होत्था महयाहि०, तत्थ णं हत्थिणाउरे णगरे बहुमज्झदेसभाए एत्थ णं महं एगे गोमंडवए होत्था, अणेगखंभसयसन्निविट्ठे पासाईए ४—

अर्थ—निश्चय करके हे भगवन्त ! मैं आपकी आज्ञा प्राप्त कर वाणिजगाम नगर में गया, यावत् तथाविध (उपरोक्त अनुसार एक आदमी नरक जैसी) वेदना वेदता है, तो हे भदन्त ! वह पुरुष पूर्व भव में कौन था ? कि

जो इस प्रकार की वेदना को यावत् अनुभवता हुआ रहता है ? भगवान् महावीर स्वामी ने उत्तर दिया—निश्चय करके इस प्रकार हे गौतम ! उस काल उस समय के अन्दर इस ही जम्बूद्वीप नाम के द्वीप में भरत क्षेत्रान्तरगत हस्तिनापुर नामका नगर था, ऋद्धिवाला, भयमुक्त और समृद्धिवाला था; उस हस्तिनापुर नगर का सुनन्द नामका राजा था, महाहिमवन्त पर्वत के समान मुख्य था, उस हस्तिनापुर नगर के अतिशय मध्य प्रदेश में इस स्थान में एक विशाल गौमंडप (गायों के रहने का सुन्दर स्थान) था, सैंकड़ों खंभों से युक्त था, हृदय आह्लादक ४ (दर्शनीय-मनोहर-सुन्दर) था ।

टीकार्थ—'रिद्धि' यानी "रिद्धित्थिमियसमिद्धे' इत्यादि जानना. यहां पर ऋद्धं-मकानों से वृद्धि को प्राप्त ऐसा, स्तिमितं-भय-वर्जित ऐसा, समृद्धं-धन, जनादियुक्त; ऐसा नगर था 'महयाहि' इससे "महयाहिमवंतमलयमदरमहिंदसारे" महाहिमवन्त, मलय, मंदर (मेरु), महिन्द्रपर्वत सदृश सारभूत, ऐसा नर नाथ था. 'पासा' इससे यहां पर-"पासाईए दरिसणिज्जे अभिरूवे पडिरूवे" प्रासादीयः- मनके प्रसन्नता का हेतुभूत, दर्शनीयः—देखने योग्य यानी जिसको देखने से नेत्र थकें नहीं, अभिरूपः-अभिमतरूप यानी सुन्दररूप, प्रतिरूपः— देखने वाले को प्रिय मालूम होता था, ऐसा गोमण्डप था.

मूल—तत्थ णं बहवे णगरगोरूवाणं सणाहा य अणाहा य णगरगाविओ य णगरवसभा य णगरबलिवद्दा

सणाहाण य जाव वसभाण य ऊहेहि य थणेहि य वसणेहि य छप्पाहि य ककुहेहि य वहेहि य कन्नेहि य अच्छि-हि य नासाहि य जिब्भाहि य उट्ठेहि य कंबलेहि य सोल्लेहि य तलिएहि य भज्जिएहि य परिसुक्केहि य लावणेहि य सुरं च महुं च मेरगं च जातिं च सीधुं च पसण्णं च आसाएमाणीओ विसाएमाणीओ परिभुंजेमाणीओ परि-भाएमाणीओ दोहलं विणयंति; तं जइ णं अहमवि बहूणं नगर जाव विणिज्जामित्तिकट्टु—

अर्थ—धन्य है उन माताओं को ४ (पुण्यशालिनी हैं वे माताएँ-कृतार्थ हैं वे माताएँ-शुभ लक्षण वाली हैं वे माताएँ) जिनके जन्म और जीवन का अच्छा फल प्राप्त हुवा है कि जिससे वे माताएँ नगर के बहुत से पशु सनाथ यावत् सांड हैं उनके उधस यानी स्तनके बींट, स्तन, अण्डकोस, पुच्छ, खंधे के शिखर (स्थूभी), खंधे, कान, नेत्र, नासिकाएँ, जीभ, होठ, कम्बल (गलेके लकटता हुवा चमड़ा) इत्यादि शरीर के अवयव पके हुवे, तले हुवे, भुंजे हुवे, स्वयं सूखे हुवे हों उनमें नमक का संस्कार किया हो यानी मसाला डाला हो, उन सबके साथ मदिरा- सहत-जाइके पुष्प समान, धावड़ी वृक्ष से बनी हुई, द्राक्षासव वगैरा मदिरा; इन सब पदार्थों को आस्वादन करती हुई, विशेष स्वाद लेती हुई, स्वयं खाती हुई, दूसरे को देती हुई अपना दोहला पूर्ण करती हैं—इस तरह मैं भी नगर के बहुत पशुओं के यावत् मांसादि खाकर अपना दोहला पूर्ण करूं तो धन्य होऊँ—

टीकार्थ—'धन्नाओ णं ताओ अम्मयाओ' धन्य हो उन माताओं को; यावत् करण से ऐसा जाना जाता है—"पुन्नाओ णं ताओ अम्मयाओ कयत्थाओ णं ताओ अम्मयाओ कयलक्खणाओ णं ताओ, तासि अम्मयाणं सुलद्धे जन्मजीविय फले" मूलके अर्थ माफिक स्पष्ट समझ लेना—'ऊहेहि य' सॉड के स्तनो के ऊपरी भाग यानी बीटों से. 'थणेहि य' स्तनों से 'वसणेहि य' वृषणैः—अण्डकोषों से. 'छेप्पाहि य' पुच्छैः—पूछों से. 'ककुहेहि य' ककुदैः— खंधे के शिखरों से. 'वहेहि य' वहैः—खंधों से. कान वगैरा स्पष्ट हैं—'कंबलेहि य' सास्नाभिः—गरदन की लटकती हुई चमड़ियों से. 'सोल्लिएहि य' पक्वैः—पके हुवे से. 'तालिएहि य' तले हुवे घी या तेल से 'भज्जिएहि य' भ्रष्टैः—भुंजे हुवे या सेके हुवे से. 'परिसुक्केहि य' अपने आप सूखे हुवे से. 'लावणेहि य' नमक मिलाये हुवे यानी मसाले डाले हुवे से. सुरा—चावल, धावडे की छाल वगैरा से बनी हुई मदिरा. मधु—मक्खियो से उत्पन्न हुवा सहत. मेरकं—तालफलसे उत्पन्न. जातिः—जाई के फूल समान रंग वाला मदिरा. सिधु—गुड़ और धावड़ी से निष्पन्न. प्रसन्ना—दाख वगैरा द्रव्य से उत्पन्न, मनकी प्रसन्नता का हेतु ऐसा मदिरा (शराब) मिले हुवे से 'आसाएमाणिओ' थोड़ा खाया जाय और बहुत फेंका जाय ऐसे सेलड़ी (सांठा) के टुकड़े. 'विसाएमाणिओ' विशेष खाया जाय और थोडा फेका जाय ऐसी खर्जुरादि (पिंडखजूर वगैरा) 'परिभुंजमाणिओ' सब खाया जाय अल्प भी त्यागा नही जाय ऐसी हरी दाखें वगैरा आप खाती हुई 'परिभाएमाणिओ' दूसरे को देती हुई ऐसी माताएँ धन्य हो.

मूल—तंसि दोहलंसि अविणिज्जमाणंसि सुक्का भुक्खा निम्मंसा ओलुग्गा ओलुग्गसरीरा नित्तेया दीण-विमणवयणा पंडुल्लइयमुहा ओमंथियनयणवयणकमला जहोइयं पुप्फवत्थगंधमल्लालंकाराहारं अपरिभुंजामाणी

टीकार्थ—'इमं च णं' इतः—यहां से यानी इस वक्त. "भीमे कूडग्गाहे जेणेव उप्पला कूडग्गाही तेणेव उवागच्छाति, उवागच्छित्ता उप्पलं कूडग्गाहिणी ओहयमाण संकप्प" इत्यादि सूत्र पहिले कहे हुवे. सूत्र के अनुसार परिपूर्ण करके अध्ययन करना चाहिये; पुस्तक की सूचना मात्र से यह जानना—

मूल—तते णं से भीमे कूडग्गाही उप्पलं भारियं एवं वयासी—मा णं तुमं देवाणुप्पिया ! ओहय झियाहि अहन्नं तं तहा करिस्सामि जहा णं तव दोहलस्स संपत्ती भविस्सति, ताहिं इट्ठाहिं ५ जाव वग्गूहिं समासासेति, तते णं से भीमे कूडग्गाही अद्धरत्तकालसमयंसि एगे अबीए सन्नद्ध जाव पहरणे सयाओ गिहाओ निग्गच्छइ, सयाओ गिहाओ निग्गच्छित्ता हत्थिणाउरे नगरे मज्झंमज्झेणं जेणेव गोमंडवे तेणेव उवागते—

अर्थ—तदनन्तर (यह सुनकर) भीम कूटग्राही ने उत्पला पत्निको इस कदर कहा—हे देवानुप्रिये ! तुम चिंतातुरा मत होवो, मैं वह उस तरह करूँगा (वैसा उपाय करूंगा) जिस तरह तुमारे दोहलों की प्राप्ति पूर्ण हो; इस तरह इष्ट ५ (कान्त-प्रिय-मनोहर-अविस्मृत) यावत् वाणी से उसको आश्वासन दिया; तत्पश्चात् वह भीमकूटग्राही अर्धरात्री के काल समय एकाकी दूसरा नहीं (दूसरा साहयक नहीं) जिरावखतर पहन कर यावत् शस्त्र हाथ में लेकर अपने घर से निकलता है, अपने घर से निकल कर हास्तिनापुर के मध्य मध्य में जहां गोमण्डप है वहां पर प्राप्त होता है।

टीकार्थ—'ताहिं इट्ठाहिं' इस से-पांच लक्षणों से ऐसा दिखाई देता है-"कंताहिं पियाहिं मणुन्नाहिं मणामाहिं" ये सब पूर्ववत् एकार्थी हैं. 'वग्गूहिं' वाग्भिः-वचनों से. 'एगे' एकः-सहायता के अभाव से एकेला. 'अबीए' अद्वितीयः-दूसरा नही यानी धर्म रूप सहायता के अभाव से. 'सन्नद्धबद्धवम्मियकवए' अर्थ पूर्ववत् जानना; यावत् करण से-उप्पीलियसरासणपट्टीए गहियाउहपहरणे" अर्थ पूर्ववत्-यह अन्त में जानना।

❀ पापी दोहला पूर्ण हुवा ❀

मूल-बहूणं णगरगोरुवाणं जाव वसभाण य अप्पेगइयाणं ऊहे छिंदति जाव अप्पेगइयाणं कंबले छिंदति अप्पेगइयाणं अण्णमण्णाणं अंगोवंगाणं वियंगेति २ त्ता जेणेव सए गिहे तणेव उवागच्छति २ त्ता उपल्लाए कूटग्गाहिणीए उवणेति, तते णं सा उप्पला भारिया तेहिं बहूहिं गोमंसेहि य सूलेहि य सुरं च आसाएमाणी तं दोहलं विणेति, तते णं सा उप्पल्ला कूडग्गाही संपुन्नदोहला संमाणियदोहला विणीयदोहला वोच्छिन्नदोहला संपन्नदोहला

अर्थ—तदनन्तर वह बालक जन्मते ही बड़े २ शब्दों से 'घोष (अव्यक्त घोंघाट) करने लगा, विरस शब्द करने लगा तथा चिल्लाने लगा; तब उस लड़के के चिल्लाहट के शब्द सुने, सुन करके हस्तिनापुर नगर में नगर के बहुत से जानवर यावत् सॉड भय भीत हुवे ४ (त्रास पाये—तृपातुर हुवे—अत्यन्त भय पाये) उद्वेग पाये, सर्व दिशा और विदिशाओं में भगगये; इसके बाद उस पुत्र के माता—पिता ने इस ही प्रकार का (गुणनिष्पन्न) नाम स्थापन किया—हमारा यह लड़का जन्मते ही बड़े २ शब्दों से घोष, (चिचारियें) कठोर शब्द करने लगा और चिल्लाने लगा, तब इस पुत्र का चिल्लाहट सुना, सुनकर हस्तिनापुर मे बहुत से नगर के जानवर यावत् भय भीत ४ हुवे; तमाम दिशा—विदिशाओ मे पलायन करगये, इस वास्ते हमारे लडके का नाम 'गोत्रास' हो।

टीकार्थ—'भीया' भीताः—डरे, इससे वहां पर "तत्था तसिया संजाय भया" त्रास पाये-तृपातुर हुवे-अतिशय भयभीत हुवे; ये सब भयकी अधिकता के कथन करने वाले एकार्थी विशेषण हैं. 'सव्वओ' तमाम दिशाओं में. 'समन्त' विदिशियों में 'विपलाइत्थ' विपलायितवन्ति-भागते हुवे अर्थात् भागे. ऐसे वे जानवर. 'अयमेयारूवं' यह इसही प्रकार कहेजाने वाला स्वरूप. 'महया २ चिच्चीं' महता २ चिच्चीति-जोर २ से चिल्लाता. 'आरसिय' आरासितं-अराटा करता; ऐसा वह लड़का. 'सोच' अवधार्य-धारण करके यानी सुन कर के-वे जानवर घबरा जाते थे.

मूल—तते णं से गोत्तासे दारए उमुक्कबालभावे जाते यावि होत्था, तते णं से भीमे कूडग्गाहे अन्नया कयाई कालधम्मुणा संजुते, तते णं से गोत्तासे दारए बहूणं मित्तणाइनियगसयणसंबंधिपरिजणेणं सद्धिं संपरिवुडे रोयमाणे कंदमाणे विलवमाणे भीयस्स कूडग्गाहिस्स निहरणं करेति, निहरणं करित्ता बहूइं लोइयमयकज्जाइं करेति, तते णं से सुनंदे राया गोत्तासं दारयं अन्नया कयाइ सयमेव कूडग्गाहित्ताए ठावेति.

अर्थ—तत्पश्चात् वह गोत्रास बालक बालभाव से (बचपन से) मुक्त हुवा यानी युवा अवस्था में प्रवेश किया, तब वह भीमकूटग्राही किसी एक वख्त काल धर्म को प्राप्त हुवा यानी मरण शरण हुवा, तदा उस गोत्रास लड़के ने मित्र–ज्ञातिजन–गौत्रीय–स्वजन, (मां, बाप, काका, भाई बग़ैरा) संबंधी (सुसराल वाले) परिजन (परिवार) के साथ घिरे हुवे ने रुदन करते हुवे, आक्रन्द करते हुवे, विलाप करते हुवे भीमकुटग्राही की श्मसान सवारी निकाली, तदनन्तर उस सुनन्द राजाने गोत्रास लड़के को किसी एक दिन आप खुदने कूटग्राही के स्थान पर स्थापन किया.

टीकार्थ— ×× ×× ×× ×× ××

टीकार्थ—'एयकम्मे' ऐसे कर्म वाला, इस से यहां पर ऐसा जानना "एयप्पहाणे एयविज्जे एयसमायारे" इस का अर्थ मूलार्थ के माफ़िक़ समझना. 'अट्टदुहट्टोवगए' आर्त वा आर्त्त ध्यानं-चिन्ता उत्पादक विचार, दुर्घटं-कठिनता से रोका जाय ऐसा, उपगतः-प्राप्त हुवा है जिसको ऐसा वह गोत्रास.

उज्झितक का जन्म-मात पिता का मरण लोगों का दुर्व्यवहार

मूल-तते णं सा विजयमित्तस्स सत्थवाहस्स सुभद्दा नामं भारिया जायनिन्दुया यावि होत्था, जाया जाया दारगा विणिहायमावज्जंति, तते णं से गोत्तासे कूडग्गाहे दोच्चाओ पुढवीओ अणंतरं उव्वट्टित्ता इहेव वाणियगामे नयरे विजयमित्तस्स सत्थवाहस्स सुभद्दाए भारियाए कुच्छिंसि पुत्तत्ताए उववन्ने, तते णं सा सुभद्दा सत्थवाही अण्णया कयाइं नवण्हं मासाणं वहुपाडिपुन्नाणं दारगं पयाया।

अथ—पश्चात् उस विजयमित्र सार्थवाह के सुभद्रा नाम की भार्या जातनिन्दु (मृतक प्रसवती) थी, जो जो लड़के उत्पन्न होते वे सब नाश होजाते थे; अर्थात् मरे हुवे बचों को जन्मती थी. उसके बाद इधर वह गोत्रास कूटग्राही दूसरी नरक से तुरन्त निकल कर इस ही वाणिजग्राम नगर में विजयमित्र सार्थवाह की सुभद्रा पत्नि की कूक्षि में अवतरा, तब उस सुभद्रा सार्थवाहिणी ने किसी एक दिन नव मास पूर्ण होने पर पुत्र को जन्म दिया।

टीकार्थ—'जायणिंदुया यावि' जातनिर्दु ॥—सन्तान उत्पन्न होते ही मर जांय जिसके ऐसी वह सुभद्रा है, वा और अपि ये समर्थन के लिये हैं; इस ही को कहते हैं-जन्मते २ लड़के नष्ट हो जाते हैं यानी मरजाते हैं जिसके, ऐसा समझना.

मूल—तते णं सा सुभद्दा सत्थवाही तं दारगं जायमेत्तयं चेव एगंते उक्कुरुडियाए उज्झावेइ उज्झावेत्ता दोच्चंपि गिण्हावेइ गिण्हावेत्ता आणुपुव्वेणं सारक्खमाणी संगोवेमाणी संवड्ढेति, तते णं तस्स दारगस्स अम्मापियरो ठिइवडियं चंदसूरदंसणं च जागरियं महया इड्ढीसक्कारसमुदएणं करेंति, तते णं तस्स दारगस्स अम्मापियरो इक्कारसमे दिवसे निवत्ते सम्पत्ते बारसमे दिवसे इममेयारूवं गोण्णं गुणनिप्फन्नं नामधेज्जं करेंति, जम्हा णं अम्हं इमे दारए जायमित्तए चेव एगंते उक्कुरुडियाए उज्झिते तम्हा णं होउ अम्हं दारए उज्झियए न.मेणं। तते णं से उज्झियए दारए पंचधातीपरिग्गहीए तंजहा—खीरधाईए १ मज्जण

मूल—तते णं से विजयमित्ते सत्थवाहे अन्नया कयाइं गणिमं च १ धरिमं च २ मज्जं च ३ परिच्छेज्जं च ४ चउव्विहं भंडगं गहाय लवणसमुद्दं पोयवहणेणं उवागते, तते णं से विजयमित्ते तत्थ लवणसमुद्दे पोयाविवत्तीए निवुड्डभंडसारे अत्ताणे असरणे कालधम्मुणा संजुत्ते, तते णं तं विजयमित्तं सत्थवाहं जे जहा वहवे ईसरतलवरमाडंवियकोडुंबियइब्भसेट्ठिसत्थवाहा लवणसमुद्दे पोयाविवत्तीए छूढं निव्बुड्डभंडसारं कालधम्मुणा संजुत्तं सुणेंति ते तहा हत्थनिक्खेवं च वाहिर भंडसारं च गहाय एगंते अवक्कमंति.

अर्थ—तदनन्तर वह विजयमित्र सार्थवाह किसी एक वक्त १ गणिम [गिनकर बेंची जाय-सुपारी, नारियल वगैरा] २ धरिम [तोलकर बेंची जाय-घी-शक्कर आदि] ३ मेय (माप से बेंची जाय-वस्त्र-फीता प्रभृति) ४ परिच्छेद (परीक्षा से बेंची जाय-रत्न-हीरा-पन्ना इत्यादि) वस्तुएँ यानी चार प्रकार के क्रयाणे लेकर लवण समुद्र में जहाज द्वारा व्यापार करने गया, तब उस विजयमित्र सार्थवाह का लवण समुद्र में जहाज टूट जाने से सारभूत सर्व क्रयाणा डूब गया, इससे वह रक्षण हीन और शरण रहित होकर काल धर्म से युक्त हुवा, यानी मरण को प्राप्त हुआ; तत्पश्चात् विजय सार्थवाह के लिये बहुत से युवराज, कोतवाल, मंडपाधिपति, कौटुम्बिक, धनाढ्य सेठ, सार्थपति ने "लवण समुद्र में जहाज डूबजाने से उसका सर्व बढिया क्रयाणा डूबगया है और वह काल धर्म प्राप्त हुवा है" जैसे सुना

वैसे ही उन्हों नें हस्तनिक्षेप (अपने पास रक्खी हुई स्थापन यानी धरोड़) को और बहार रक्खे हुवे सारभूत भाड (क्याणे) को दबाकर एकान्त में चले गये, अर्थात् जिसके हाथ जो पडा सो लेगया ।

टीकार्थ—'कालधम्मुणा' मरणेन–मृत्यु से 'लवणसमुद्दपोयविवात्तियं' लवणसमुद्र में जहाज की आपत्ति प्राप्त हुई है जिसको ऐसा वह, उसको (मृत्युगत जानकर) 'निवुड्डभंडसारं' डूबगया है सारभूत क्याणा जिसका, 'कालधम्मुणा संजुत्तं' काल धर्मेणयुक्तं कालधर्म से युक्त यानी मरगया, उनने जैसा था वैसा सुना, यह अपेक्षा योग्य है 'हत्थनिक्खेवं' हस्तनिक्षेपः–जिस द्रव्य को हाथ में रक्खा यानी सोपा वह 'हस्त निक्षेप' कहा जाता है, 'बहिरभंडसारं च' हस्तनिक्षेप के सिवा सार वस्तुएँ लेकर एकान्त दूर चले जाते हैं–विजयमित्रसार्थवाह की भार्या और उसके पुत्र को वे दर्शन देते हैं, अर्थात् उस धनको हरण करते हैं, ऐसा यावत् शब्द से जानना.

मूल—तते णं सा सुभद्दा सत्थवाही विजयमित्तं सत्थवाहं लवणसमुद्दे पोयविवत्तीए निब्बुड्ड कालधम्मुणा संजुत्तं सुणेति २ त्ता महया पइसोएणं अफ्फुण्णा समाणी परसुणियत्ताविव चंपगलता धसत्ति धरणीतलंसि सव्वंगेण सन्निवडिया, तते णं सा सुभद्दा सत्थवाही मुहत्तंतरेण आसत्था समाणी बहूहिं मित्त जाव परिवुडा रोयमाणी कंदमाणी विलवमाणी विजयमितसत्थवाहस्स लोइयाइं मयकिच्चाइं करेति, तते णं सा सुभद्दा सत्थवाही अन्नया कयाइं लवणसमुद्दोत्तरणं च लच्छिविणासं च पोयविणासं च पतिमरणं च अणु-

ग्राम नगर मे त्रीकोण मार्ग पर यावत् सर्व मार्गों पर, जुँआस्थान पर, वेश्याओं के घरों पर और मदिरापान के स्थानों पर (रखड़ता हुआ) सुखे २ बड़ा होने लगा। तदनन्र उस उज्झितक लड़के को बलात् हाथ पकड कर रोकने वाला नहीं होने से, और वचन द्वारा भी निषेधक नहीं होने से वह स्वच्छन्द मतिवाला, अपनी इच्छानुसार चलने वाला, मदिरा (शराब) के प्रसङ्गवाला तथा चौरी-जूँआ-वेश्या-अन्य स्त्रियों का प्रसङ्गी हुवा. उसके बाद वह उज्झितक किसी एक वख्त कामध्वजा गणिका के साथ संलग्न हुवा यानी उसका सङ्गी हुवा, कामध्वजा गणिकाके साथ विस्तृत और उदार मनुष्यो के भोगने योग्य भोग भोगता हुआ रहता है।

टीकार्थ—'अणोहट्टए' जो बलसे हाथ बगैरा खींचकर प्रवर्तमान् को निवारण करे वह अपघट्टक, उसका अभाव सो अनयघट्टक कहा जाता है. अणिवारिए' रोकने वाले से रहित था; इसही लिये 'सच्छन्दमइ' स्वच्छन्दा मतिः—आपमते चलनेवाला अथवा स्वतन्त्रमति है जिसकी वह स्वच्छन्दमति समझना. इस ही कारण 'सइरप्पयारे' स्वैर प्रचारः—नहीं निवारण करने से अपने मत्यानुसार प्रचार (प्रवृत्ति) है जिसकी वह, 'वेसदारपसंगी' वेश्यादारा प्रसङ्गी—गणिका और स्त्रीका संगी अथवा वेश्या रूप जो स्त्रियाँ उनका प्रसङ्गी. 'भोगभोगाइं' भोगभोगाः—भोजन सो भोग और परिभोग (वस्त्रादि) भोगता था; भोगा—भोगके योग्य शब्दादि (शब्द-रूप-रस-गंध-स्पर्श) वे भोग और भोगभोगाः—रुचिकर शब्दादि—उज्झितक भोगता था

मूल—तते णं तस्स विजय मित्तस्स रन्नो अन्नया कयाइं सिरीए देवीए जोणिसूले पाउब्भूए यावि

होत्था, नो संचाएइ विजयमित्ते राया सिरीए देवीए सद्धिं उरालाइं माणुस्सगाइं भोगभोगाइं भुंजमाणे विहरित्तए। तते णं से विजयमित्ते राया अन्नया कयाइं उज्झियदारयं कामज्झयाए गणियाए गिहाओ निच्छुभावेति २ त्ता कामज्झयं गणियं अब्भिंतरियं ठावेति २ त्ता कामज्झयाए गणियाए सद्धिं उरालाइं भोगभोगाइं भुंजमाणे विहरति–

अर्थ—तत्पश्चात् विजयमित्र राजा की श्रीदेवी रानी के एकदा किसी वख्त योनिशूल [गुप्तेन्द्री में शूलका रोग] उत्पन्न होगया था, विजयमित्र राजा श्रीदेवी के साथ प्रधान मनुष्य योग्य भोग-परिभोग भोगने को असमर्थ होता हुआ रहता है, तब उस विजयमित्र राजाने किसी एक दिन उज्झितक लड़के को कामध्वजा गणिका के घरसे निकलवा दिया, निकलवाकर कामध्वजा वेश्या को अपने आभ्यन्तर में (रणवास में) रखली, रखकर उस कामध्वजा पात्र के साथ उदार भोग-परिभोग भोगता हुआ रहता है।

टीकार्थ— ×× ×× ×× ×× ××

मूल—तते णं से उज्झियए दारए कामज्झयाए गणियाए गिहाओ निच्छुभेमाणे कामज्झयाए गणियाए मुच्छिए गिद्धे गाढिए अज्झोववन्ने अन्नत्थ कत्थइ सुइं च रइं च धिइं अविंदमाणे तच्चित्ते तम्मणे तल्ले-

की भावना में भावित (बसा हुआ) है, ऐसा वह उज्झितक लड़का रहता है—'अंतराणि' कामध्वजा गणिका का बहुत अन्तरकाल यानी राजा के आनेके अन्तर कालकी 'छिद्दाणि' छिद्राणि-राजपरिवार की अल्पता की. 'विवराणि' अन्य मनुष्यों के अभाव की 'पडिजागरमाणे' गवेपणा करता हुआ वह उज्झितक निवास करता था।

राजा के प्रकोप से उज्झितक पर घोर आफत

मूल-इमं च णं मित्ते राया ण्हाते जाव पायच्छित्ते सव्वालंकारविभूसिए मणुस्सवागुरापरिक्खित्ते जेणेव कामज्झयाए गिहे तेणेव उवागच्छाति २ त्ता तत्थ णं उज्झियए दारए कामज्झयाए गणियाए सद्धिं उरालाइं भोगभोगाइं जाव विहरमाणं पासति २ त्ता आसुरुत्ते तिवलियभिउडिं निडाले साहट्टु उज्झिययं दारयं पुरिसेहिं गिण्हावेइ २ त्ता अट्ठिमुट्ठिजाणुकोप्परपहारसंभग्गमाहितगत्तं करेति करेत्ता अवउडगबंधणं करेति २त्ता एएणं विहाणेणं वज्झं आणावेति। एवं खलु गोयमा ! उज्झियते दारए पुरापोराणाणं कम्माणं जाव पच्चणुभवमाणे

विहरति (सू० १३)

अर्थ—इतने में मित्रराजा स्नान कर प्रायश्चित (दुष्टस्वप्नादि हरण करने के लिये अमुक विधान) कर, सर्व अलंकारों से भूषित होकर, चारों ओर मनुष्यों से व्याप्त होकर जहां पर कामध्वजा गणिका का घर है वहां पर आते हैं, आकर वहां पर उज्झितक लड़के को कामध्वजा गणिका के साथ उदार भोगों को भोगता हुआ यावत् विचरण करता हुआ देखते हैं, देखकर तत्काल क्रुद्धित हुवे कपाल में त्रिवल्ली (तीन सल) वाली भृकुटी चड़ाकर उज्झितक लड़के को अपने पुरुषों से पकड़ाया, पकड़ाकर यष्टि (लकड़ी) मुष्टि, घुटने और कोणियों के प्रहार से शरीर तुड़वा दिया है (हड्डियां तुड़वा दीं हैं) अथवा दही के माफ़िक मंथन करवा दिया है, कराकर उल्टी मुस्कियों से बँधाया, बंधाकर इसही तरह उसको मारने की आज्ञा करी. इस प्रकार निश्चय करके हे गौतम ! उज्झितक लड़का पूर्व में किये हुवे पुराने कर्मों का यावत् प्रत्यक्ष अनुभव करता हुआ रहता है।

टीकार्थ—'इमं चणं' इतश्चेत्यर्थः–इतने में-'ण्हाए' स्नानं कृत्वा–स्नान करके यावत् करण से ऐसा जानना–'कयबलिकम्मे' कृतबलिकर्म–देवताओं को बलिविधान (पूजाका विधान) किया. 'कयकोउय मंगलपायच्छित्ते' कृतकौतुकानि च मंगल–प्रायश्चित्तानि–किया है कौतुक मंगल और प्रायश्चित्त; अर्थात् कौतुक (स्याही–सपेत कलम आदि) मंगल (सपेत सरसों-दहि-चावल वगैरा) प्रायश्चित्त (दुष्ट स्वप्नादि के नाश के हेतु अवश्य करने योग्य विधान) इन तीन कामों को करके वह राजा गया. 'माणुस्सवग्गुरापरि-

टीकार्थ—'वानरपेल्लए' वानरडिम्भान्-वन्दर के बच्चों को 'तं एयकम्मे' तदेत् कर्म्मा-उससे इस कर्मवाला; यहां पर यह विपेश जानना "एयप्पहाणे एयाविज्जे एयसमुदाचारे" अर्थ मूलार्थ के माफिक करना।

मूल—तते णं तं दारयं अम्मापियरो जायमित्तकं वद्धेहिंति नपुंसगकम्मं सिक्खावेहिंति, तते णं तस्स दारगस्स अम्मापियरो णिवत्त वारसाहस्स इमं एयारूवं णामधेज्जं करेंति तं०—होऊ णं पियसेणे णामं णपुंसए, तते णं से पियसेणे णपुंसए उमुक्कवालभावे जोव्वणगमणुप्पत्ते विण्णयपरियणमिते रूवेण य जोव्वणेणग लावण्णेण य उक्किट्ठे उक्किट्ठे सरीरे भविस्सइ।

अर्थ—तदन्तर उस लड़के को मात पिता जन्मते ही वार्द्धितक (नपुंसक) करेंगे, नपुंसक का कर्म शिखावें गे; पश्चात् उस लड़के के मात पिता वारह दिन व्यतीत होने पर इस कदर नाम स्थापन करेंगे, तद्यथा-प्रियसेन नपुंसक (हमारे लड़के का) नाम हो; तब वह प्रियसेन, नपुंसक वचपन से मुक्त होकर युवा अवस्था को पाकर विज्ञान परिणाम (कलाएँ) उपलब्ध करेगा, रूप-यौवन-लावण्य (कान्ति) से उत्कृष्ट २ शरीर वाला (अत्यन्त खूबसूरत) होगा.

टीकार्थ—'बद्धेहिंति' वार्द्धितकं करिष्यतः-नपुंसक बनावे गा. 'उक्किट्ठे' उत्कर्षवान्-उच्चतावाला, इससे क्या कहा गया? 'उक्किट्ठसरीरे' उत्कृष्ट शरीरवाला।

मूल—तते णं से पियसेणे णपुंसए इंदपुरे णगरे बहवे राइसर जाव पभिइओ बहूहि य विज्जापओगेहि य मंतचुन्नेहि य हियउड्डावणाहि य निण्हवणेहि य पण्हवणेहि य वसीकरणेहि य आभिओगिएहि य अभिओगित्ता उरालाइं माणुस्सगाइं भोगभोगाइं भुंजमाणे विहरिस्सति, तते णं से पियसेणे णपुंसए एयकमे० सुबहुं पावकम्मं समज्जिणित्ता एक्कवीसं वाससयं परमाउयं पालइत्ता कालमासे कालंकिच्चा इमिसे रयणप्पभाए पुढवीए णेरइयत्ताए उववज्जिहिति, ततो सिरिसिवेसु सुसुमारे (संसारो) तहेव जहा पढमो० जाव पुढवी० से णं तओ अणंतरं उव्वट्टित्ता—

अर्थ—तत्पश्चात् वह प्रियसेन नपुंसक इन्द्रपुर नगर में बहुत से राजा यावत् सर्व जनों के विद्या प्रयोगों से और मन्त्र तथा चूर्ण के योग से हृदय की शून्यता करने वाले, अदृश्यता करने वाले, प्रसन्न करने वाले, वशीकरण करने वाले, पराधीन करने वाले प्रयोगों से पराश्रित करके उदार मनुष्य संम्बधी भोग-परिभोगों को भोगता हुवा विचरेगा, तदा वह प्रियसेन नपुंसक ऐसे कर्म वाला (कर्म करने में तत्पर-विज्ञान वाला-आचार वाला) अतिशय पाप कर्म उपार्जन करके एकसो-इकवीस वर्ष की उत्कृष्ट आयुष्य पालकर कालमास में काल करके इस रत्नप्रभा नाम की पृथ्वी के अन्दर प्रथम नारकी में नेरइया-रूप उत्पन्न होगा; उसके बाद सरिसृप (नौलिया) की योनी में

अध्ययन का विवरण समाप्त हुवा.

उपसंहार-इस दूसरे अध्ययन में उज्झितक की वार्तमानिक स्थिति दयापात्र है, वैश्या (गणिका-पात्र-रंडी) गमन से किस तरह का भयंकर फल प्राप्त होता है वह इस दुर्व्यसनी की आचरणा से दीपक के समान स्पष्ट मालूम होता है; गोत्रासक के पूर्वभव में इसने निरपराधी पशुओं की ऐसी कातिल हिंसा की कि बाँचने से ही त्रास छूटता है; इसही से इसकी इस भवमें अवाँच्छनीय विडंबना मात्र ही नहीं हुई, किन्तु शूली पर चढाकर प्राण लिये गये, भाविकाल में नरकादि के असह्य दुःखों को भोगेगा, अन्त में मोक्षपद प्राप्त करेगा, ऐसा भगवन्त महावीर देवने व्यक्त किया है—महानुभावों ! इस उज्झितक के जुल्मी कर्त्तव्यों पर निगाह पहुँचा कर पापों से बचिये गा और इस के अन्तिम भव के सदृश्य अनुसरणीय करणी कर परम शान्ति को प्राप्त करने का प्रयत्न कीजिये गा।

दुःख विपाक का दूसरा अध्ययन मूल-अर्थ और
टीकार्थ सहित सम्पूर्ण हुवा।



❀ तीसरा अध्ययन ❀

(अभग्नसेन)



मूल—तच्चस्स उक्खेवो–एवं खलु जम्बू ! तेणं कालेणं तेणं समएणं पुरिमताले णामं णगरे होत्था, रिद्ध०, तस्स णं पुरिमतालस्स णगरस्स उत्तरपुरच्छिमे दिसीभाए एत्थ णं अमोहदंसणे उज्जाणे तत्थ णं अमोहदंसिस्स जक्खस्स जक्खायतणे होत्था, तत्थ णं पुरिमताले महव्वले नामं राया होत्था, तत्थ णं पुरिमतालस्स णगरस्स उत्तरपुरच्छिमे दिसीभाए देसप्पंते अडवी संठिया ।

अर्थ—तीसरे अध्ययन का उत्क्षेप (प्रस्तावना) करना–निश्चय करके इस प्रकार हे जम्बू ! उस काल उस समय में पुरिमताल नामक नगर था, ऋद्धिवाला, निर्भय और समृद्धिवाला था; उस पुरिमताल नगर के उत्तर पूर्व के दिशिभाग में (इशान कोंण में) यहां पर अमोघदर्शन उद्यान था, उस उद्यान में अमोघदर्शी यक्ष का यक्षायतन था; उस पुरिमताल नगर में महावल नाम का राजा राज्य करता था; उस पुरिमताल नगर के इशान कोंण में

था, शब्दवेधी (आवाज पर वांण फैकने वाला) था, अधर्मी था, खड्गलता में पहिले नम्बर का मल्ल था; वह वहां पर शालाटवी चौरपल्ली में पांच सो चौरों पर आधिपत्य करता हुवा यावत् रहता था.

टीकार्थ—'विसमगिरिकंदरकोलंबसन्निविट्ठा' पर्वत की कठिन गुफाओं के किनारे पर वसी हुई थी; कोलम्ब शब्द का अर्थ झुकी हुई वृक्ष शाखा का अग्र भाग होता है; परन्तु यहां पर उपचार से कोलम्ब का अर्थ कन्दरा का अग्र भाग यानी किनारा कहा है. 'वंसीकलंकपागारपरिक्खित्ता' वंशीकलङ्कप्राकारपरिक्षिप्ता-वांसों की झाड़ी से वीटी हुई थी. 'छिन्नसेलविसमप्पवायफरिहोवगूढा' छिन्नः—जुदे टुकड़ों के अन्तर की अपेक्षा से जो पर्वत सम्बन्धी. विषमाः-कठिन. प्रपाताः-खड्डे. उसकी परिखा-खाई. उससे वेष्टिता-युक्ता थी. 'अब्भितरपाणीये' अन्दर पानी मिलता था. 'सुदुल्लभजलपेरंता' सुष्टुदुर्लभं जलं पर्यन्तेषु यस्याः सा-जिसके बाहर कठिनता से जल प्राप्त होता था, ऐसी वह 'अणेग खंडी' अनेक भागने वाले पुरुषो के मार्गरूप गुप्तद्वार हैं जिसमे. 'विदियजणदिन्ननिग्गमप्पवेसा' जानने वाले लोग ही आना जाना करसकते हैं जिसमे, ऐसी वह पल्ली थी. 'सुबहुस्सवि' सुबहोरपि-बहुत जन होने पर भी. 'कुवियजणस्सवि' लूटा हुवा धन वापिस लेनेको आये हुवे क्रोधित लोग उस चोरपल्ली को नाश नही कर सकते थे. 'अहम्मिए' अधार्मिकः-अधर्म से चलता है सो. यावत् करण से 'अधम्मिट्ठे' अधर्मिष्टः-पाप कर्म करने के कारण अत्यन्तता से निकल गया है धर्म जिसका. 'अधम्मक्खाई' अधर्माख्यायी-अधर्म बोलने का स्वभाव है जिसका. 'अधम्माणुए' अधर्मानुज्ञः वा अधर्मानुगः-अधर्म कर्तव्य का अनुमोदन हो जिसका अथवा अधर्म के पीछे चलनेवाला. 'अधम्मप्पलोई' अधर्म्मप्रलोकी-अधर्म ही देखने का स्वभाव

है जिसका. 'अधम्मपलज्जणे' अधर्म्मप्ररजनः-प्रायः अधर्म कर्मों में ही रंजित है वह-रकार-लकार का एकी भाव करके रकार के स्थान पर लकार हुवा-'अधम्मसील समुदायारे' अधर्म्मशीलसमुदाचारः-अधर्म स्वभाव वाला अनुष्ठान है जिसका. 'अधम्मेणं चेव वित्तिं कप्पेमाणे विहरइ' अधर्म्मेणैव च वृत्तिं कल्पयन् विहरति-अधर्म से ही यानी पाप से ही अर्थात् सावद्य अनुष्ठान से ही जलाने से-डाम लगाने से, अगता (लिङ्गछेदन) आदिकर्म से आजीविका करता हुवा रहता है. 'हणछिंदभिंद वियत्तए' हनछिन्धि-विनाशार्थ दो टुकडे करदो. भिन्दं विधेहि-भाले वग़ैरा से भेदन करो; इस प्रकार दूसरों को प्रेरित करता हुवा प्राणियों को जो नाश करावे वह हन छिन्द भिन्द विकर्तक कहा जाता है; इनके अनुकरण रूप होने से हन इत्यादि शब्द संस्कृत में भी विरुद्ध नहीं है. 'लोहियपाणी' लोहितपाणी-प्राणियो की हत्या करने से लोहि से लाल होगये हैं दोनों हाथ जिसके ऐसा वह चौरनायक. 'वहुणगरणिग्गयजसे' वहुत से नगरों में प्रसिद्ध है यश जिसका; इससे शूरवीरादि चारों विशेषण प्रकट हैं. 'आसिलठ्ठिपढममल्ले' असियष्टिः-खड्गलता. उसमें प्रथमः-पहिला या प्रधान. मल्लः-योद्धा है, ऐसा वह 'आहेवच्चं' आधिपत्यं-अधिपतिकर्म; यावत् शब्द से "पोरेवच्चं सामित्तं भट्टित्तं महत्तरगत्तं आणाइसरसेणावच्चं" व्याख्या पूर्ववत् ।

मूल—तते णं से विजए चोरसेणावई बहूणं चोराण य पारदारियाण य गंठीभेयाण य संधिच्छेयाण य खंडपट्टाण य अन्नोसिं च बहूणं छिन्नभिन्न बाहिराहियाणं कुंडगे यावि होत्था, तते णं से विजए चोरसेणावई पुरिमतालस्स णगरस्स उत्तरपुरच्छिमिल्लं जणवयं बहूहिं गामघातेहि य नगरघातेहि य गोग्गहणेहि य

वचनों से तर्जना करता हुवा. 'तालेमाणे' ताडयन्-चाबुक वगैरा से मारता हुवा. 'णिच्छाणे' निस्थानं कुर्वन्' स्थान हीन करता हुवा 'निद्धणे' निर्धनंकुर्वन्-गाय, भेंसादि पशुधन रहित करता हुवा, 'क्रप्पायं' कल्पायः कुर्वन्-उचित लाभ करता हुवा यानी प्रजा से द्रव्य लाभ करता हुवा. 'अहीण' इससे "अहीणपुन्नपंचेदियसरीरा लक्खणवंजणगुणोववए" इसका अर्थ मूलार्थ के माफिक जानना।

गणधर महाराज एक दयनीय दृश्य देखते हैं

मूल—तेणं कालेणं तेणं समएणं समणे भगवं महावीरे पुरिमतालनयरे समोसढे, परिसा निग्गया रायानिग्गओ धम्मो कहिओ परिसा राया य पडिगओ, तेणं कालेणं तेणं समएणं समणस्स भगवओ महावीरस्स जेट्ठे अंतेवासी गोयमे जाव रायमग्गं समोगाढे, तत्थ णं वहवे हत्थी पासति वहवे आसे पुरिसे सन्नद्धवद्धकवए तेसी णं पुरिसाणं मज्झगयं एगं पुरिसं पासति अवउडय जाव उग्घोसेज्जमाणं, तते णं पुरिसं रायपुरिसा पढमंमि चच्चरंसि निसियावेंति, निसियावेत्ता—

अर्थ— उस काल उस समय में श्रमण भगवन्तमहावीर देव पुरिमताल नगर में (नगर के उद्यान में) समवसरे, पर्षदा निकली, राजा भी निकले (प्रभु वंदन के लिये निकले) प्रभु ने धर्मोपदेश दिया, पर्षदा और राजा वापिस गये; उस काल उस समय के अन्दर श्रमण भगवान् महावीर के बड़े शिष्य गौतम गणधर यावत् राजमार्ग में पधारे, वहां पर उनने बहुत से हाथी देखे, घोड़े देखे और जिराबख्तर पहने हुवे मनुष्य देखे, उन पुरुषों के बीच में एक पुरुष देखा, वह उलटी मुस्कियों से बाँधा हुवा था, यावत् (नाक-कान काटे हुवे थे, शरीर पर तैल लगाया हुवा था, इत्यादि दूसरे अध्ययन के माफिक) पुरुषों द्वारा उद्घोषणा किया जारहा था; तदनन्तर राजपुरुष उस पुरुष को पहिले एक चच्चर (चोंतरा) पर बैठाया, बैठा करके—

टीकार्थ—'अवउडय' यावत् करण से "अवउडग बंधणबद्ध उक्खत्तकन्ननासं नेहुचुप्पियगत्तं' इत्यादि पूर्ववत्. अर्थ मूलार्थ के समान जानना. 'पढमंमि चच्चरंसि' प्रथमे चर्चरे-पहिले चोंतरे (स्थानविशेष) पर. 'निसियावंति' निवेशयन्ति-बैठाया ।

मूल—अट्ठ चुल्लप्पियए अग्गओ घाएंति अग्गओ घाएत्ता कसप्पहारेहिं तालेमाणा २ कलुणं काकणिमंसाइं खावेंति खावेत्ता रुहिरपाणीयं च पायंति तदाणंतरं च णं दोच्चंसि चच्चरंसि अट्ठ चुल्लमाउयाओ अग्गओ घायंति एवं तच्चे चच्चरे अट्ठ महापिउए चउत्थे अट्ठ महामाउयाओ पंचमे पुत्ते छट्ठे सुण्हा सत्तमे

करण से 'अग्गओ घायेंती' आगे मारते, ऐसा कहना चाहिये. 'चउत्थे' चतुर्थे चर्त्वरे-चौथे चोंतरे पर. 'अट्ठ महामाउयाओ' अष्टौ-पितुर्ज्येष्ठभ्रातृजायाः अथवा मातुर्ज्येष्ठा सपत्नीः- आठ पिताके बड़े भाईयों की पत्नियॉ यानी बड़ी माताएँ, अथवा माता की बड़ी सोतें. पंचमे चत्वरे- पॉचवें चोंतरे पर पुत्रों को उस पुरुष के आगे मारते हैं. षष्टे स्नुषाः-छट्टे पर पुत्र वधुओं को. सप्तमे जामातृकान् +दुहितुर्भर्तृन्- सातवें पर पुत्री के भर्तार जवांईयों को 'अट्ठमे धुयाओ' अष्टमे दुहितॄः- आठवें पर पुत्रियों को. 'णवमे नत्तुए' नवमे नप्तृन्- नौवें पर पौत्रों को वा दोहित्रों को. 'दसमे नत्तुईओ' दशमे नप्तॄः-पोतियों को वा दोहितियों को 'एकारसमे नत्तु यावइ' एकादशे नप्तृकापतीन्- ग्यारहवें पर पौत्रियो के अथवा दोहित्रियों के पतियों को यानी जवाईयों को. 'बारसमे णत्तुइणीओ' द्वादशे नप्तृकिनीः- बारहवें पर पोते या दोहितों की भार्याओं को. 'तेरसमे पिउसियपइय' त्रयोदशे पितृष्वसापतिकान्—तेरहवें पर भुवाओं के पतियों को यानी फूफ़ाओ को. 'चोद्दसमे पिउसियाओ' चतुर्दसे पितृष्वसॄः— चौदहवें पर पिता की बहनों को यानी भुवाओं को. 'पण्णरसमे माउसियापइय' पञ्चदशे मातृष्वसुः पतिकान्-पन्द्रहवें पर माता की बहन के भर्त्तारों को यानी मासाओं को. 'सोलसमे माउसियाओ' षोडशे मातृष्वसॄः-सोलहवे पर माता की बहनों को यानी मासियों को 'सत्तरसमे मामियाओ' सप्तदशे मातुलभार्याः-सतरहवें पर मामा की स्त्रियों मामियो को. 'अट्ठारसमे अवसेसं' अष्टादशे अवशेषं-अठारहवे चोतरे पर बाकी सब. 'मित्तणाइणियगसंबंधिपरियणं' मित्राणि-मित्रों को, ज्ञातयः-समान जाति वाले, निजका-मामा के पुत्र इत्यादि, सम्बंधिनः-सुसरा, साला बगैरा, परिजनः-दास दासी आदि को बैठा कर मारते थे; इत्यादि पूर्ववत् सब जानना।

दयनीय पुरुष के विषय में गौतम स्वामी की पृच्छा भगवन्त ने पूर्वभव फरमाया.

मूल—तते णं से भगवं गोयमे तं पुरिसं पासेइ २ त्ता इमे एयारूवे अज्झत्थिए पत्थिए समुपन्ने जाव तहेव निग्गते एवं वयासी–एवं खलु अहन्नं भंते ! तं चेव जाव से णं भंते ! पुरिसे पुव्वभवे के आसि ? जाव विहरति; एवं खलु गोयमा ! तेणं कालेणं तेणं समएणं इहेव जंबुद्दीवे दीवे भारहे वासे पुरिमताले नाम नयरे होत्था, रिद्ध० तत्थणं पुरिमताले नयरे उदिओदिए नामं राया होत्था, महया० तत्थ णं पुरिमताले निन्नए नामं अंडयवाणियए होत्था, अड्ढे जाव अपरिभूते अहम्मिए जाव दुपडियाणंदे ।

अर्थ—तदनन्तर भगवान् गौतम गणधर ने उस पुरुष को (ऊपर कहे हुवे प्रकार से) देखा, देख करके इस प्रकार का अध्यवसाय चिंतित यानी विचार उत्पन्न हुवा (यह आदमी प्रत्यक्ष नरक जैसा दुःख भोगता है, इत्यादि) यावत् उस ही तरह निकले (गौचरी लेकर नगर से बाहार निकले) और भगवन्त के पास आकर इस क़दर निवे-

पात्थिका पिटकानि–बांस के बने हुवे टोकरे कागली, घूअड़ी, टिंटोड़ी, बगुली, मोरड़ी, कुकुड़ी, ये सब प्रसिद्ध हैं; अण्डे प्रतीत हैं।

मूल—तते णं से तस्स निन्नयस्स अंडवाणियस्स बहवे पुरिसा दिण्णभति० बहवे काइअंडए य जाव कुक्कुडि अंडए य अन्नेसिं च बहुणं जलयरथलयरखहयरमाईणं अंडए य तवएसु य कवल्लीसु य कंडुएसु य भज्जणएसु य इंगालेएसु य तलिंति भज्जेंति सोल्लिंति तलेंता भज्जंता सोल्लेंता रायमग्गे अंतरावणंसी अंडयएहि य पणिगएणं वित्तिं कप्पेमाणा विहरंति; अप्पणावि य णं से निन्नयए अंडवाणियए तेहिं बहूहिं काइय अंडएहि य जाव कुक्कुडिअंडएहि य सोल्लेहि य तलिएहि य भज्जेहि य सुरं च आसाएमाणे विसाएमाणे विहरति। तते णं से निन्नए अंडवाणियए एय कम्मे ४ (एयप्पहाणे एयविज्जे एयसमायारे) सुबहुं पावकम्मं समज्जिणित्ता एगं वाससहस्सं परमाउयं पालइत्ता कालमासे कालं किच्चा तच्चाए पुढवीए उक्कोस सत्तसागरोवमठिइएसु णेरइएसु णेरइयत्ताए उववन्ने (सू० १७).

अर्थ—तत्पश्चात् उस निन्हव अंडकवाणिक ने बहुत से लोगों को भृति (पैसे वगैरा) और भक्त (अनाज भोजनादि) इत्यादि दिये हुवे थे जिससे वे लोग कव्वी के अंडों को यावत् कूकड़ी के अंडों को तथा अन्य बहु से जलचर–स्थलचर–गगनचर (मगरमच्छादि–गाय, भेंसादि–पक्षीगण) के अंडे तावड़ी में (सुवाली वस्तु माल

पुवे वगैरा तलने का भाजन) कवली के अन्दर (गुड़ादि पकाने का पात्र) कंडुके विषे (रोटी पकाने का भाजन तवा आदि) भर्जनक में (धाणी फोड़ने का पात्र कडायला वगैरा) अंगारे के ऊपर रखकर तैल में पुड़ी के माफिक तलने थे, धाणी के सदृश भूंजते थे और चावल के समान पकाते थे, अथवा टुकड़े २ करते थे. तलकर, भूंजकर, पकाकर राजमार्ग के मध्य में रही हुई अंडों की दुकानों में इन तैयार किये हुवे अंडोंको बेंचकर अपनी आजीविका चलाता हुवा रहता था, तथा वह निन्हव अंडवाणिक स्वयं भी कागली यावत् कूकड़ी के अंडों को रांधकर, तलकर, भूंजकर मदिरादि के साथ मिलाकर आस्वादन करता हुवा, वारंवार खाता हुवा रहता था। तदनन्तर वह निन्हव अंडकवणिक ऐसे कर्मवाला, ऐसे ही कर्म में कटिबद्ध, ऐसे ही कर्म में विद्यावान् (कलावान्) ऐसे ही कर्म की आचरणा करने वाला अत्यन्त पापकर्म उपार्जन करके एक हज़ार वर्ष का उत्कृष्ट आयुष्य पूर्णकर, कालसमय काल-कर तीसरी पृथ्वी के अन्दर (नरक में) उत्कृष्ट सात सागरोपम वाले नारकपने (नेरईयापने) उत्पन्न हुआ.

टीकार्थ—'तवएसु य–कवल्लीसु य–कंडुसु–भज्जणएसु य + तलन्ति–भज्जन्ति–सोल्लिन्ति च + अन्तरावणंसि अंडयपणिएणं सुरं च=तवकानि–कवल्यः–कन्दवः–भर्जनकानि कर्प्पराणि–तलयान्ति, पचान्ति, राध्यन्ति, खण्डशः वा कुर्वन्ति–राजमार्ग मध्यवर्तीहट्टे–अंडकपण्येन–मदिरादिना–इन सब के अर्थ मूलार्थ के माफिक जानना.

करक उचित स्थान पर आतीं हैं, पुरुष वेष धारण कर, कवच पहन करके यावत् प्रहरण को गृहण कर, ढाल को हाथ के पाखररूप धारण कर, तलवार को म्यान से बाहर निकालकर (नग्गी तलवार लेकर) बाण के भाथे को खंधे पर लटकाकर, धनुष पर प्रत्यंचा (डोरी) चढाकर, फैंकने के लिये बाणों को ऊँचे करके, दाम यानी अमुक पाश (शस्त्र विशेष) को लम्बा कर, अथवा दाह यानी लम्बे बांस पर बांधा हुआ दातरड़े जैसा शस्त्र विशेष को ऊँचा करके, जंघा के ऊपर (कमर के नीचे) घुघुरों लटकाकर, वाजिन्त्रों को शीघ्र बजवाने से, बड़े २ उत्कृष्ट महाध्वनि (आनन्द महाध्वनि) आकाश को मानो समुद्र गर्जारव से युक्त करती हो ऐसी शालाटवी नामकी चौरपल्ली को सर्वतः चारों ओर (दिशा विदिशाओं में) देखती २ और फिरती २ अपने दोहले पूर्ण करतीं हैं; इस लिये मैं भी उस ही तरह यावत् दोहले को पूर्ण करूँ तो अच्छा हो-ऐसा करके यानी दोहला पूर्ण नहीं होने से यावत् (सुखागई-रूखी-होगई-खेदपाई वगैरा) आर्त्तध्यान करने लगी.

टीकार्थ — 'जिमियभुत्तुत्तरागयाओ' जेमिताः — भोजन किया है जिन्होंने, भुक्तोत्तरं - भोजन के पश्चात्, आगताः- योग्य स्थान पर आई ऐसी माताएँ. 'पुरिसनेवत्थिज्ज' कृतपुरुषनेपथ्याः- धारण किये हैं पुरुष के वेष जिन्होंने. 'सन्नद्ध-वद्ध' पहिने हैं कवच जिन्होंने; यावत् शब्द से ऐसा जानना- "सन्नद्धवद्धवम्मियकवइया उप्पीलियसरासणपट्टिया पिणद्धगेविज्जा विमलवरचिंधपट्टा गहियाउहपंहरणावरण" जिराबख्तर पहनी हुई, शरीर के रक्षण करने वाले कवच धारण की हुई, प्रत्यंचा चढाकर धनुष तैयार की हुई,

गरदन के आभूषण पहनी हुई तथा निर्मल और श्रेष्ठ चिन्ह पट्ट (डोरे) बांधी हुई; ऐसी माताएँ. 'भरिएहिं' हस्तपाशितैः – हाथ के पड़खों से 'फालिएहिं' स्फाटिकैः— चलचलाट, 'निकट्ठाहिं' कोशकादाकृष्टैः – म्यान से बहार निकाली हुई, ऐसी 'असिहिं':– खड्गैः – तलवारों से. 'अंसागाएहिं' स्कन्धमागतैः – पीठ पर बांधने से कन्धो पर आये हुवे, 'तोणेहिं' बाणों की बहुलता से. 'सजीवेहिं' सजीवैः – प्रत्यञ्चा चढ़ाई हुई ऐसे, 'धणूहिं' कोदण्डकैः – धनुषों से. 'समुविक्खत्तेहिं सरेहिं' समुत्क्षिप्तैर्बाणैः – छोड़ेजाने वाले बाणों से 'समुल्लासियाहिं' समुल्लासिताभिः – उंचे किये हुवे, ऐसे 'दामाहिं' पाशकविशेषैः – अमुक पाशकों से. कहीं पर 'दाहाहिं' – ऐसा पाठ है – लम्बे बांस के अग्रभाग पर बांधे हुवे शस्त्र विशेष यानी दातरड़े. 'ओसारियाहिं' प्रलम्बिताभिः – लटकती हुई, ऐसी 'उरुघंटाहि' जङ्घाघण्टिकाभिः – जांघों की घंटियों से. 'छिप्पतूरेणं वज्जमाणेणं' क्षिप्रतूर्येण वाद्यमानेन – शीघ्रवाजिन्त्र बजाने से. 'महया उक्किट्ठि' बड़े उत्कृष्ट, यावत् करण से ऐसा देखा जाता है–"महया उक्किट्ठिसीहनाय बोल कलयलरवेणं" उत्कृष्टिश्च–आनन्द महाध्वनिः सिंहनादश्च–आनन्दमय उच्चस्वर, सिंह के माफ़िक गर्जना, बोलश्च – अनक्षरध्वनिः कलकलश्च – व्यक्त वचन; ऐसे लक्षण वाले वचन उनसे व्याप्त. 'समुद्दरव भूयंपिव' जलधि शब्द प्राप्तमिव–गगन मण्डल में समुद्र के गर्जारव की प्राप्ति समान यानी तन्मय सदृश. वह अटवी 'तं जइ अहंपि' तत् – तस्माद्यद्यहमपि –उस तरह यदि मैं भी; यहां पर यावत् शब्द से ऐसा जानना – "बहुहिं मित्तणाइणियगसयणसंबंधि परियणमहिलाहिं अन्नाहिं" –बहुतसी मित्र की ज्ञाति स्वजन – सम्बंधी – परिजन की और अन्य चौरों की पत्नियो सहित. 'दोहलं विणिएज्जामी' दोहदं व्यपनयामि– दोहले को पूर्ण करूं, ऐसा करके यानी इस हेतुसे 'तंसि दोहलंसि' तास्मिन् दोहदे – उस दोहले में. यहां यावत् करण से "अविणि-

मित्त जाव अण्णाहिं य वहूहिं चौरमहिलाहिं सद्धिं संपरिवुडा ण्हाया जाव विभूसिया विपुलं असणं ४ सुरं च आसाएमाणा विसाएमाणा विहरइ, जिमिय भुत्तुत्तरागया पुरिसनेवत्था सन्नद्धवद्ध जाव आहिंडमाणी दोहलं विणेति, तते णं सा खंदसिरी भारिया संपुन्न दोहला संमाणिय दोहला विणीय दोहला वोच्छिन्न दोहला संपन्न दोहला तं गब्भं सुहंसुहेणं परिवहति; तते णं सा खंदसिरी चोरसेणावतिणी णवण्हं मासाणं वहुपडि पुन्नाणं दारगं पयाया।

अर्थ — तदनन्तर वह खंदश्री भार्या विजय चौरसनापति की आज्ञा प्राप्त करती हुई हर्षित और संतोषित होकर बहुतसी मित्रकी स्त्रियों से तथा बहुतर अन्य चौर भार्याओं से परिवृत होती हुई स्नान करके यावत् आभूषणों से भूषित होकर असनादि चार प्रकार के आहार और मदिरा का एकवार आस्वादन करती हुई, वारंवार स्वाद लेती हुई विचरती हैं; भोजन करनेके पश्चात् उचित स्थान पर आती है, पुरुष वेश धारण करती है, कवच पहन कर यावत् चौरपल्ली में घूम २ कर अपना दोहला पूर्ण किया, बाद वह खंदश्री भार्या समस्त मनो वांछित पूर्ण होने से सम्पूर्ण दोहला वाली हुई, सन्मानित दोहला वाली हुई, वाँछा तृप्त होने से मुक्त दोहला वाली हुई, वॉछा के बंधन का विच्छेद होने से विच्छेद दोहला वाली हुई, वाँछित भोगोंका आनन्द प्राप्त होने से संप्राप्त दोहला वाली हुई

इस तरह उस गर्भ का सुख पूर्वक पालन करती है. अनन्तर उस खंदश्री चौरसेनापत्नि ने नौ मास परिपूर्ण होने पर पुत्र को जन्म दिया।

टीकार्थ— ×× ×× ×× ×× ××

पुत्र का जन्मोत्सव और विवाहादि प्रसंग पिता का मरण और नायकपद प्राप्ति

मूल — तते णं से विजयए चोरसेणावति तस्स दारगस्स महया इड्ढिसक्कारसमुदएणं दसरत्तं ठिइवडियं करेति, तते णं से विजयए चोरसेणावइ तस्स दारगस्स एक्कारसमे दिवसे विपुलं असणं ४ उवक्खडावेति मित्तणाति० आमंतेति २ त्ता जाव तस्सेव मित्तनाइ० पुरओ एवं वयासी – जम्हा णं अम्हं इमंसि दारगंसी गब्भगयंसि समाणंसी इमे एयारूवे दोहले पाउब्भूते तम्हा णं होउ अम्हं दारगे अभग्गसेणे णामेणं, तते णं से अभग्गसेणे कुमारे पंचधातीए जाव परिवड्ढइ. (सू० १८)

टीकार्थ—'अट्ठदारियाओ' अष्टदारकाः—आठ कन्याओं. इस से यह भाव है कि—"तए णं तस्स अभग्गसेणस्स कुमारस्स अम्मापियरो अभग्गसेणं कुमारं सोहणंसी तिहिकरण णक्खत्तमुहुत्तंसि अट्ठहिं दारियाहिं सद्धिं एगदिवसेणं पाणिं गिण्हाविंसु" तदनन्तर उस अभग्रसेन कुमार के मात पिताने उत्तम तिथी, करण, नक्षत्र, महूर्त्त में आठ लड़कियों के साथ एक ही दिन में पाणि ग्रहण कराया यानी पुत्र का विवाह किया. यावत् करण से ऐसा देखा जाता है—"तए णं तस्स अभग्गसेणस्स कुमारस्स अम्मापियरो इमं एयारूवं पीइदाणं दलयंति" बाद उस अभग्रसेन कुमार को उसके मात पिताने इस प्रकार का यह प्रीतिदान दिया 'अट्ठओदाओ' अष्टको दायः, दानं—अष्ट संख्यक दान दिया; वह इस प्रकार का है—"अट्ठ हिरण्णकोडीओ अट्ठ सुवण्णकोडीओ—इत्यादि यावत्—अट्ठ पेसण कारियाओ अन्नं च विपुल धणकणगरयणमणिमोत्तियसंखसिलप्पवालरत्तरयणमाइयं संतसारसावएज्जं" आठ क्रोड़ का बिना घड़ा सोना यानी चीपें अथवा डले, आठ क्रोड़ का घड़ा हुवा सोना यानी जेवर-इत्यादि पर्यन्त आठ लाने-लेजाने वालियां; और भी बहुतसा-धन (नक़द) सुवर्ण, रत्न, मणि, मोति, शंख, शिला प्रवाल, लालरत्न बगैरा; उत्तम सार भूत धन दिया. 'उप्पिं भुंजई' ऊपर यानी महल पर आनन्द भोगता है—इसका यह भावार्थ है कि—"तएणं से अभग्गसेणे कुमारे उप्पिं पासायवरगते फुट्टमाणेहिं मुयंगमत्थएहि वरतरुणिसंपउत्तेहिं बत्तीसइबद्धेहिं नाडएहिं उवगिज्जमाणे विउले माणुस्सए काम भोगे पच्चणुब्भवमाणे विहरइ" तत्पश्चात् वह अभग्रसेन कुमार श्रेष्ठ महल के ऊपर मृदंगादि वाजित्रों के बजते हुवे और जवान स्त्रियों के क्रिये हुवे बत्तीस प्रकार के नाटकों से प्रशंसा प्राप्त करता हुवा मनुष्य संबंधी विपुल काम भोगों का अनुभव करता हुवा रहता है.

देश के लोगों का परस्पर विचार और नृपेन्द्र से प्रार्थना

मूल– तते णं से अभग्गसेणे कुमारे चोरसेणावइ जाते अहम्मिए जाव कप्पायं गेण्हति, ततेणं से जाणवया पुरिसा अभग्गसेणेणं चोरसेणावइणा बहुगामघातावणाहिं ताविया समाणा अण्णमन्नं सद्दावेंति२ त्ता एवं वयासी– एवं खलु देवाणुप्पिया ! अभग्गसेणे चोरसेणावइ पुरिमतालस्स णगरस्स उत्तरिल्लं जणवयं बहूहिं गामघातेहिं जाव निद्धणं करेमाणे विहरति, तं सेयं खलु देवाणुप्पिया ! पुरिमताले णगरे महब्बलस्स रन्नो एयमट्ठं विन्नवित्तते.

अर्थ—पश्चात् वह अभग्नसेन कुमार चौरसेनापति होने पर अधर्मी हुवा यावत् कल्पायन (कर का राजधन) ग्रहण करने लगा, बाद देश के लोग अभग्नसेन चौरसेनापति द्वारा बहुत से गांव नाश होने पर संतापित होकर परस्पर बुलाने लगे, बुलाकर इस प्रकार कहने लगे – निश्चय करके हे देवों के वल्लभ ! अभग्नसेन चौरसेनापति पुरिमताल नगर के उत्तर भाग में रहे हुवे देश के बहुतेरे गामों का नाश करता हुवा यावत् निर्धन करता हुवा रहता है; इसलिये हे देवों के प्यारे ! पुरिमताल नगर के महाबल राजा को यह वृतान्त निवेदन करना श्रेयस्कर है।

अर्थ—तत्पश्चात् उस महाबल राजा ने देशवासी पुरुषों के पास से यह बात सुन कर, हृदय में धारणकर क्रोधाक्रान्त हुवा यावत् क्रोधाग्निसे धमधमाते हुवे ललाट में तीन सल चढ़ाकर दंड नायक (कोतवाल) को बुलाया, बुलाकर इस प्रकार आज्ञा करी– अहो देवों के प्रिय ! तुम जाओ सालाटवी चौरपल्ली का विनाश करो, विनाश करके अभग्नसेन चौरसेनापति को जीते को पकड़ लो, पकड़कर मेरे पास हाजिर करो.

टीकार्थ—'दंडं' दण्डनायकम्—कोतवाल को. 'जीवग्गाहं गेण्हाहि' जीवन्तं गृहाण—जीते को पकड़ लो.

मूल—तते णं से दंडे तहत्ति एयमट्ठं पडिसुणेति, तते णं से दंडे बहूहिं पुरिसेहिं सण्णद्धबद्ध जाव पहरणेहिं सद्धिं संपरिवुडे मग्गइतेहिं फलएहिं जाव छिप्पतूरेणं वज्जमाणेणं महया जाव उक्किट्ठिं जाव करेमाणे पुरिमतालं णगरं मज्झं मज्झेणं निग्गच्छति २ त्ता जेणेव सालाडवीए चोरपल्लीए तेणेव पहारेत्थ गमणाते.

अर्थ—तब उस दंड नायक ने 'प्रमाण वचन' कहकर यह अर्थ धारण किया, बाद वह दंड नायक (कोतवाल) बहुत से पुरुषों के साथ जिरावख्तर पहनकर यावत् प्रहरण (हथियार) लेकर उनके साथ रहा हुवा हाथ में पाश और भुजा पर ढाल को स्थापन कर शीघ्र ही बजते हुवे वाजिन्त्रों के साथ उत्कृष्ट यावत् करता हुवा यानी आनन्द ध्वनि करता हुवा पुरिमताल नगर के बीचोबीच होकर निकला, निकलकर जहां पर सालाटवी चौरपल्ली है वहां के लिये रवाना हुवा.

टीकार्थ — × × × × × × × × × ×

चौरसेनापति को गुप्तचरों से पता लगा रोकने का उद्दाम प्रयत्न

मूल — तते णं तस्स अभग्गसेणस्स चोरसेणापतियस्स चारपुरिसा इमिसे कहाए लद्धट्ठा समाणा जेणेव सालाडवी चोरपल्ली जेणेव अभग्गसेणे चोरसेणावइ तेणेव उवगच्छंति २ त्ता करयल जाव एवं वयासी— एवं खलु देवाणुप्पिया ! पुरिमताले णगरे महब्बलेणं रन्ना महाभडचडगरेणं दंडे आणत्ते—गच्छह णं तुमे देवाणुप्पिया ! सालाडवीं चोरपल्लीं विलुंपाहि अभग्गसेणं चोरसेणावतिं जीवग्गाहं गेण्हाहि २ त्ता मम उवणेहि, तते णं से दंडे महया भडचडगरेणं जेणेव सालाडवी चोरपल्ली तेणेव पहारेत्थ गमणाए।

अर्थ— तदनन्तर उस अभग्नसेन चौरसेनापति के गुप्तचर पुरुषों को यह हकीकत मालुम होने पर वे लोग जहां सालाटवी चौरपल्ली है, जहां अभग्नसेन चौरसेनापति है वहां आते हैं, आकर दोनों हाथ जोड़ कर इस प्रकार

अर्थ— तदनन्तर उस अभग्नसेन चौरसेनापति ने विस्तार पूर्वक असन-पान-खादिम-स्वादिम; चार प्रकार का भोजन तैयार कराया, तैयार कराकर ५०० चौरों के साथ स्नान किया यावत् प्रायश्चित्त (मंगल तिलकादि) कर भोजन मंडप में विस्तृत असनादि चार प्रकार का आहार और मदिरादि का एक वार और वारंवार सेवन करता हुवा रहता है, भोजन करने के पश्चात् उचित स्थान पर आकर आचमन (कुल्ला) कर मुख शुद्धि करके अत्यन्त पवित्र होकर पांच सौ चौरों के साथ आर्द्रचर्म (गीला चमड़ा) पर बैठा (मंगलार्थ बैठा) आर्द्रचर्म पर बैठकर सन्नद्धबद्ध होकर (बख्तरादि धारण कर) यावत् आयुध और प्रहरण (हथियार) ग्रहण कर हाथ में पाशले (शस्त्रविशेष) लेकर यावत् आनन्द शब्दों से मध्यान्ह काल में शालाटवी चौरपल्ली से निकलता है, चौरपल्ली से निकलकर विषम यानी ऊंचा-नीचा, और प्रवेश न होसके ऐसे गहन स्थान में (वृक्षोंकी झाड़ीवाले स्थानमें) मुकाम किया तथा आहार पानी का साधन रख कर दंडनायक की प्रतीक्षा (राह) करता हुवा रहता है।

टीकार्थ— 'मग्गइएहिं' हस्तपाशितैः— हाथ में पाशल ग्रहण किये हुवे ऐसे. यावत् करण से 'फलिएहिं' स्फटिकैः—ढाल धारण किये हुवे ऐसे 'विसमदुग्गगहणं' विषमं नीचा-ऊंचा, दुर्गं- कठिनता से प्रवेश होसके, गहनं- दरख्तों की झाड़ी वाला स्थान.

दंडनायक का पराजय

मूल—तते णं से दंडे जेणेव अभग्गसेणे चोरसेणावइ तेणेव उवागच्छति, तेणेव उवागच्छित्ता अभग्गसेणे णं चोरसेणावतिणा सद्धिं संपलग्गे यावि होत्था, तते णं से अभग्गसेणे चोरसेणावइ तं दंडं खिप्पामेव हयमहिय जाव पडिसेहिए, तते णं से दंडे अभग्गसेणेण चोरसेणावइणा हय जाव पडिसेहिए समाणे अथामे अबले अवीरिए अपुरिसक्कार परक्कमे अधारणिज्जमितिकट्टु जेणेव पुरिमताले णगरे जेणेव महब्बले राया तेणेव उवागच्छति, उवागच्छित्ता करयल एवं वयासी—

अर्थ— तत्पश्चात् वह दंडनायक जहां अभग्रसेन चौरसेनापति है वहां आता है, आकर अभग्रसेन चौरसेनापति के साथ युद्ध करने लगा, बाद उस अभग्रसेन चौरसेनापति ने उस दंडनायक को तत्काल हत-प्रहत किया यानी सेना का और मानका मर्दन किया यावत् प्रतिषेध किया अर्थात् संग्राम में से भगा दिया, तब वह दंडनायक

उसको कोइभी बड़े भारी अश्वसैन्य से, हस्तिसैन्य से सुभटसैन्य से, रथसैन्य से, इस प्रकार चारों प्रकार के सैन्य से भी साक्षात् पकड़ नहीं सकता, इसलिये साम्यनीति से (प्रीतिपूर्ण वचनों से) भेदनीति से (स्वामी सेवक में फूट डालने से) उपप्रदान यानी दान नीति से (इच्छित वस्तुदेने से) विश्वास देकर पकड़ने के योग्य है तथा उसके जो आभ्यन्तर लोग (मंत्री वगैरा) विनीत होने से शिष्यसमान लोग, मित्र - ज्ञाति - निजक - स्वजन -संम्बधि- परिजन लोगों को बहुतसा धन - सुवर्ण- रत्नरूप - उत्तम सारभूतद्रव्य देने से स्वामी से फूटकर उस के प्रीति का त्याग करेंगे; अथवा अभग्नसेन चौरसेनापति को बारंबार, बड़े मतलब का - बहुमूल्य - बड़े पुरुषों के योग्य यानी राजा के योग्य भेटना भेजने से अभग्नसेन चौरसेनापति विश्वास से वशिभूत होगा.

टीकार्थः-'उरंउरेणं' साक्षात् - प्रत्यक्ष. 'सामेण य' साम्येन - प्रेम उत्पन्न करने वाले वचन से. 'भेदेण य' भेदेन - भेद से यानी स्वामी सेवक के परस्पर अविश्वास उत्पन्न कराने से 'उवप्पयाणेण' उपप्रदानेन - इच्छित दान देने से. 'जे वि य से अब्भिंतरगा सीसग-भमा' येऽपि च आभ्यन्तरकाः शिष्यक भ्रमाः- उस अभग्नसेन के निकटवर्ती दीवान आदि- विनीत होने से शिष्यतुल्य; अथवा शिर्षक- मस्तक के कवचरूप यानी निर्दोषपने शरीर रक्षा करने से वे शरीर रक्षक कहे जाते हैं, वे सब चौरसेनापति से अलग किये जांय, यह सम्बंध जानना. 'मित्तनाइणियगे' अर्थ मूलार्थ के माफिक. 'भिंदइ' भिनत्ति- चौरसेनापति में रहा हुवा स्नेह भेदन किया जाय, अपने में प्रतिबद्धता धारण करे. 'महत्थाइं' महाप्रयोजनानि - बड़े अर्थवाले. 'महग्घाइं' महामूल्यानि- बहुमूल्य, 'महरिहाइं' महतां

योग्यानि– बड़े पुरुषों के योग्य, अथवा महं – पूजा के योग्य, अथवा महानर्ह :– पूज्य पुरुषों के योग्य; इस प्रकार के भेटने किस के लायक होते हैं ? उत्तर में – ' रायारिहाइं ' राज्ञामुचितानि – राजा के योग्य होते हैं.

चौरसेनापति को पकड़ने की कायरता पूर्ण योजना

मूल—तते णं से महब्बले राया अन्नया कयाइं पुरिमताले णगरे एगं महं महतिमहालियं कूडागारसालं करेति अणेगक्खंभसयसन्निविट्ठे पासाइए दरिसणिज्जे, तते णं से महब्बले राया अन्नया कयाइं पुरिमताले णगरे उस्सुक्कं जाव दसरत्तं पमोयं घोसावेति २ त्ता कोडुंबिय पुरिसं सद्दावेति २ त्ता एवं वयासि– गच्छहणं तुब्भे देवाणुप्पिया ! सालाडवीए चोरपल्लीए तत्थणं तुम्हे अभग्गसेणं चोरसेणावइं करयल जाव एवं वयासि–एवं खलु देवाणुप्पिया ! पुरिमताले णयरे महाबलस्स रन्नो उस्सुक्के जाव दसरत्ते पमोदं उग्घोसेति तं किन्नं देवाणुप्पिया ! विउलं असणं ४ पुप्फवत्थगंधमल्लालकारं ते इहं हव्वमाणिज्जउ उदाहु सयमेव गच्छित्ता ?

णगराओ पडिनिक्खमंति २ त्ता णातिविकिट्ठेहिं अद्धाणेहिं सुहेहिं वसहिं पायरासेहिं जेणेव सालाडवी चोरपल्ली तेणेव उवागच्छंति २ त्ता अभग्गसेणं चोरसेनापतिं करयल जाव एवं वयासी – एवं खलु देवाणुप्पिया ! पुरिमताले नगरे महव्वलस्स रन्नो उस्सुक्के जाव उदाहु सयमेव गच्छित्ता ?

अर्थ— पश्चात् आज्ञाकारी पुरुषों ने महाबल राजा का आदेश दोनों हाथ जोड़ कर स्वीकार किया, स्वीकार कर पुरिमताल नगर से रवाना होते हैं, रवाना होकर छोटी २ मंजले करते हुवे मार्ग में आराम लेते हुवे कलेवा (शिरामण) भोजनादि करते हुवे जहां पर शालाटवी चौरपल्ली है वहां पर आते हैं, आकरके अभग्नसेन चौरसेनापति को दोनों कर जोड़कर यावत् इस प्रकार निवेदन करते हैं– अहो देवों के वल्लभ ! निश्चय करके इस तरह पुरिमताल नगर के महाबल राजा ने कर माफ कर यावत् (उपरोक्त सब हकीकत कही) आहारादि यहां पर ले आवे अथवा आप खुद वहां पधारेंगे ?

टीकार्थ– ' उदाहु सयमेव गच्छित्ता ' उताहो स्वयमेव गमिष्यासि – अथवा आप स्वय आवेंगे. ' नाइविगिट्ठेहिं ' अनत्यन्तदीर्घैः– अतिलम्बे नहीं ऐसे. ' अद्धाणेहिं ' प्रयाणकैः– मुकामों से. ' सुहेहिं ' सुखैः– आराम करते हुवे. ' वसाहिपायरासेहिं ' वासिक प्रातभोंजनैः– भोजन, टीमन बगैरा से.

से मित्र-ज्ञातिजनादि परिवार के साथ स्नान किया, यावत् सर्व आभूषणों से विभूषित होकर उस असनादि चार प्रकार का आहार और मदिरा (शराब) का आस्वादन करता हुवा प्रमादी होकर (निश्चिन्त होकर) रहने लगा.

टीकार्थ- ×× ×× ×× ×× ××

दगाबाजी का नमुना

मूल—तते णं से महब्बले राया कोडुंबिय पुरिसे सद्दावेति २ त्ता एवं वयासि — गच्छह णं तुम्हे देवाणुप्पिया ! पुरिमतालस्स णगरस्स दुवाराइं पिहेह अभग्गसेणं चोरसेणावतिं जीवगाहं गिण्ह ममं उवणेह, तते णं से कोडुंबिय पुरिसा करयल जाव पडिसुणेंति २ त्ता पुरिमतालस्स णगरस्स दुवाराइं पिहेंति अभग्गसेणं चोरसेणावइं , जीवगाहं गिण्हंति महब्बलस्स रण्णो उवणेंति, तते णं से महब्बले राया अभग्गसेणं चोरसेणावइं एतेणं विहाणेणं वज्झं आणवेति, एवं खलु गोयमा! अभग्गसेणे चोरसेणावइ पुरापुराणाणं जाव विहरति ।

विश्वास के विवश चौरसेनापति का आगमन

मूलः—ततेणं से अभग्गसेणे चोरसेणावइ ते कोडंवियपुरिसे एवं वयासि – अहन्नं देवाणुप्पिया ! पुरिमताल नगरं सयमेव गच्छामि ! ते कोडंविय पुरिसे सक्कारेति पडिविसज्जेति, ततेणं से अभग्गसेणे चोर-सेणावइ वहूहिं मित्त जाव परिवुडे ण्हाते जाव पायच्छित्ते सव्वालंकारविभूसिए सालाडवीओ चोरपल्लीओ पडि-निक्खमति २ त्ता जेणेव पुरिमताले नगरे जेणेव महवल्ले राया तेणेव उवागच्छति २ त्ता करयल महव्वलं रायं जएणं विजएणं वद्धावेंति २ त्ता महत्थं जाव पाहुडं उवणेंति ।

अर्थ–तदनन्तर उस अभग्नसेन चौरसेनापति ने उन कौटुम्बिक पुरुषों को इस प्रकार कहा—हे देवानुप्रिय मैं पुरिमताल नगर में खुद आउंगा। ऐसा कह कर उन आदेशी पुरुषों का सत्कार (सन्मान) कर विदा किये, वाद उस अभग्नसेन चौरसेनापति ने वहुत से मित्रों के यावत् (अन्य सव) परिवार सहित स्नान किया, यावत्

अर्थ–तत्पश्चात् वह महाबल राजा आदेशी पुरुषों को बुलाता है, बुलाकर इस प्रकार आज्ञा करता है– अहो देवों के प्रेमपात्रों ! तुम जाओ पुरिमताल नगर के दरवाजे बंद करो और अभग्नसेन चौरसेनापति को जीता पकड़ कर मेरे पास हाज़िर करो, तब उन आदेशी पुरुषों ने हाथ जोड़कर यावत् (राजा की आज्ञा) अङ्गीकार करी करके पुरिमताल नगर के दरवाजे बंद किये और अभग्नसेन चौरसेनापति को जीता पकड़ कर राजा के पास हाज़िर किया * अब उस महाबल राजा ने अभग्नसेन चौरसेनापति को इस प्रकार (जिस प्रकार तुम देखकर आये हो) वध करने का विधान किया— इस तरह निश्चय करके हे गौतम ! यह अभग्नसेन चौरसेनापति पूर्वभव के उपार्जित कर्मों को भोगता हुवा रहता है।

टीकार्थ— ×× ×× ×× ×× ××

* राजा की पामरता-निर्बलता और अनीति का यह प्रदर्शन है.



य वसभाण य ससयाण य सूयराण य पसयाण य सिंघाण य हरिणाण य मयूणण य महिसाण य सतवद्धाण य सहस्सबद्धाण य जूहाणि वाडगंसि सन्निरुद्धाइं चिट्ठंति.

अर्थ– निश्चय करके इस प्रकार हे गौतम! उस काल उस समय के अन्दर इस ही जम्बूद्वीप नामक द्वीप में भारत-वर्षान्तरगत छगलपुर नामका नगर था, वहाँ पर सिंहगिरी नाम का राजा राज्य करता था, महान् हिमवन्त पर्वत समान बड़ा था; उस छगलपुर नगर में छाणिक नामक क़साई रहता था, धनाढ्य था, अधर्मी यावत् दूसरे का नाश कर आनन्द मानने वाला था, उस छाणिक कसाई के बहुत से बकरे, भेड़ें, रोझ, ससले, सुअर, पसय (एक जात के पशु), सिंह हिरण, मोर और पाड़े वगै़रा लाखों की तादाद में झुंड के झुंड वाड़ों में बांधे हुवे और पूरे हुवे थे.

टीकार्थ — ×× ×× ×× ×× ××

मूल— अन्नेय तत्थ बहवे पुरिसा दिन्नभइ भत्तवेयणा बहवे य अए जाव महिसे य सारक्खमाणा संगोवेमाणा चिट्ठंति, अन्ने य से बहवे पुरिसा अयाण य जाव गिहंसि निरुद्धा चिट्ठंति, अन्ने य से बहवे पुरिसा दिन्न भइ० बहवे सयए य सहस्से य जीवियाओ ववरोविंति मंसाइं कप्पिणीकप्पियाइं करेंति छणियस्स छगालियस्स उवणेंति.

अर्थ — वहां पर अन्य बहुत से पुरुष पैसे - घी - धान्य वगैरा तनख्वाह देकर नोकर रक्खे हुवे थे, वे बहुत से बकरे यावत् भैंसों की हिफ़ाजत (समय पर घास - दाना - पानी देना) और रक्षण करते हुवे रहते थे; दूसरे बहुत से लोग (नोकर) बकरों को यावत् पाड़ों को बाड़ों में रोके हुवे रहते थे; दूसरे बहुत से लोग तनख्वाओं से नोकर रक्खे हुवे थे, वे सैंकड़ों और हज़ारों जानवरों को वध (क़त्ल) करते थे, उन के मांस छूरियों से टुकड़े २ करते थे और वे छणिक कसाई को सोंपते थे.

टीकार्थ — ×× ×× ×× ×× ××

मूल — अन्ने य से बहवे पुरिसा ताइं बहूयाइं अयमंसाइं जाव महिसमंसाइं तवएसु य कवल्लीसू य कंदूएसु य भज्जणेसु य इंगालेसु य तलंति य भज्जेंति य सोल्लयंति य तलेंता भज्जंता सोल्लेंता ततो रायमग्गंसि वित्तिं-कप्पेमाणा विहरंति, अप्पणावि य णं से छन्नियए छगलीए तेहिं बहुविह अयमंसेहि य जाव महिसमंसेहि य सोल्लेहि य तलेहि य भज्जेहि य सुरं च आसाएमाणे विहरति, तते णं से छन्नीए छगलीए एयकम्मे एयप्पहाणे एयविज्जे एयसमायारे सुबहुं पावकम्मं कलीकलुसं समज्जिणित्ता सत्तवाससयाइं परमाउयं पाल- ॥१७७॥

टीकार्थ — ×× ×× ×× ×× ××

मूल — तए णं तं दारगं अम्मापियारो जायमेत्तं चेव सगडस्स हेट्ठातो ठावेंति दोच्चंपि गिण्हावेंति अणुपुव्वे णं सारक्खंति संगोवेंति संवड्ढेंति जहा उज्झियए जाव जम्हा णं अम्हं इमे दारए जायमेत्ते चेव सगडस्स हेट्ठा ठाविए तम्हा णं होउ णं अम्हं एस दारए सगडे नामेणं सेसं जहा उज्झियते, सुभद्दे लवण सम्मुद्दे कालगते माया वि कालगया, से वि सयाओ गिहाओ निच्छूढे.

अर्थ — बाद उस लड़के को मात-पिताने जन्मते ही एक शकट यानी गाड़े नीचे रख दिया, बाद वहां से वापिस लेलिया उस को स्तनपान कराते हुवे उपद्रवों से रक्षण करने लगे और बड़ा करने लगे; इत्यादि उज्झितक के माफ़िक जानना, यावत् सब के सामने यह कहा कि- हमने अपने लड़के को जन्मते ही गाड़े के नीचे रक्खा था वास्ते हमारे इस पुत्र का नाम 'शकट' होवो, बाकी सब उज्झितक के सदृश जानना; सुभद्र लवण समुद्र मे काल प्राप्त हुवा, क्रमशः माता भी मृत्युगत हुई, बाद यह शकट भी अपने घर से (राजा के हुकुम से) निकाला गया.

टीकार्थ — 'सुभद्दे लवणे काल' इस का मतलब यह है कि- "सुभद्दे सत्थवाहे लवणसमुद्दे काल धम्मुणा संजुत्ते यावि होत्था" सुभद्र सार्थवाह लवण समुद्र में काल धर्म प्राप्त हुवा.

वेश्या गमन और तिरष्कार

मूल — तते णं से सगडे दारए सयातो गिहाओ निच्छूढे समाणे संघाडग तहेव जाव सुदरिसणाए गणियाए सद्धिं संपलग्गे यावि होत्था, तते णं से सुसेणे अमच्चे तं सगडे दारगे अन्नया कयाइं सुदरिसणाए गणियाए गिहाओ निच्छुभावेति सुदंसणियं गणियं अब्भितरियं ठावेति, ठावित्ता सुदरिसणाए गणियाए सद्धिं उरालाइं माणुस्सगाइं भोगभोगाइं भुंजमाणे विहरति ।

अर्थ—तब वह शकटपुत्र अपने घर से निकलने पर त्रिकोण वगैरा मार्ग पर भटकता हुवा (द्युतादि खेलता हुवा) यावत् सुदर्शना वेश्या के साथ लुब्ध हुवा, पश्चात् उस सुसेन प्रधान ने किसी एक वक्त उस शकट पुत्र को सुदर्शना गणिका के घर में से निकाल दिया, और सुदर्शना गणिका को अपने जनाने में (पत्नि रूप) स्थापन की, स्थापन करके उस गणिका के साथ मनुष्यों के योग्य काम भोगों को भोगता हुवा रहता है ।

अर्थ — वह प्रधान शीघ्र ही क्रोधाक्रान्त हुवा, यावत् क्रोधाग्नि की ज्वाला से सर्प की तरह फूफाड़ा कर तीन सल डाल कर भृकुटि को ललाट में चढ़ा कर शकट पुत्र को पुरुषों द्वारा पकड़ाया, पकड़ा करके लकड़ी - मुष्टियों से मरम्मत कराई तथा उलटी मुश्कियों से जकड़ा कर बंधाया, बंधाकर जहां पर महाचन्द्र राजा है वहां पर आता है आकरके दोनों हाथ जोड़ कर इस प्रकार प्रार्थना करता है - निश्चय करके इस तरह हे स्वामिन् ! शकट लड़का ने मेरे जनाने में प्रवेश करने रूप अपराध (पूर्व हकीक़त सब कही) किया है; तब महाचन्द्र राजा ने सुसेन अमात्य को इस प्रकार फरमाया - अहो देवों के प्यारे ! तुम चाहो उस तरह शकट पुत्र को सजा दो * तब उस सुसेन मंत्री ने महाचंद्र राजा की आज्ञा प्राप्त कर शकट पुत्र को और सुदर्शना गणिका को इस प्रकार से वध करने की आज्ञा दी है; वास्ते निश्चय करके हे गौतम ! इस प्रकार शकट पुत्र पूर्वोपार्जित पाप कर्मों का अनुभव करता हुवा यानी भोगता हुवा रहता है ।

टीकार्थः — ×× ×× ×× ×× ××

* बिना तहकीक़ात हुक्म दिया, यह राजा के अन्याय का नमूना है

परमात्मा ने शकट का भविष्य फरमाया

मूल — सगडे णं भंते ! दारए कालगए कहिं गच्छिहिति ? कहिं उववज्जिहिइ ? सगडे णं दारए गोयमा ! सत्तावण्णं वासाइं परमाउयं पालइत्ता अज्जेव तिभागावसेसे दिवसे एगं महं अओमयं तत्तसमजोइभूयं इत्थि पडिमं अवयासाविते समाणे कालमासे कालं किच्चा इमिसे रयणप्पभाए पुढवीए णेरइयत्ताए उववज्जिहिति, से णं ततो अणंतरं उव्वट्टिता रायगिहे णगरे मातंगकुलंसि जुगलत्ताए पच्चायाहिति ।

अर्थ — हे भगवन्त ! शकट लड़का काल करके कहां जायगा ? कहां उत्पन्न होगा ? प्रभु ने फरमाया—हे गौतम ! शकट लड़का सत्तावन वर्ष की पूरी उम्र को खतम कर आज ही दिन के तीसरे भाग अवशेष रहने पर एक बड़ी भारी लोह की बनाई हुई धगधगाति अग्नि समान स्त्री की प्रतिमा से आलिङ्गन कराया हुवा * मरण समय मर कर इस

* नरक के चित्र का प्रमाणभूत इस भूमण्डल पर यह दृश्य था.

कालमासे कालं किच्चा इमिसे रयणप्पभाए पुढवीए णेरइयत्ताए, उववन्ने संसारो तहव जाव पुढवीए ।

अर्थ — बाद वह शकट पुत्र किसी एक वक्त कूटग्राहीपन (कुटलाइपन – जातिविशेष) ग्रहण कर रहेगा; तब वह शकट लड़का कूटग्राही अधर्मी होगा यावत् दूसरों को दुःख देकर आनन्द मनावेगा; इस प्रकार का कर्म करता हुवा बहुत पाप कर्म उपार्जन करके काल समय काल कर इस रत्नप्रभा पृथ्वी में (घमा नरक में) नारकपने उत्पन्न होगा इसही प्रकार (पहिले अध्ययन के समान) इसका संसारक्रम सातवीं नरक तक जानना.

टीकार्थः— ×× ×× ×× ×× ××

मूल — से णं ततो अणंतरं उवट्टित्ता वाणारसीए नयरीए मच्छत्ताए उववज्जिहिति, से णं तत्थ णं मच्छ-वंधिएहिं वहिए तत्थेव वाणारसीए नयरीए सेट्ठिकुलंसि पुत्तताए पच्चायाहिति बोहिं बुज्झे पवज्जा सोहम्मे कप्पे महाविदेहे वासे सिज्झिहिति; निक्खेवो – दुहाविवाग णं चोत्थस्स अज्जयणस्स अयमट्ठे पन्नते (सू० २३) चोत्थं अज्झयणं सम्मत्तं ॥ ४ ॥

अर्थ – तदनन्तर वह वहां से अन्तर रहित निकल कर बनारसी नगरी में मच्छपने उत्पन्न होगा, वह वहां पर

धीवरों से (मच्छीमारों से) मारा जाकर उसही वाणारसी नगरी के अन्दर सेठकुल में पुत्रपने उत्पन्न होगा, वहां युवा अवस्था में सम्यक्त्व (समकीत-देव गुरु धर्म पर श्रद्धा) प्राप्त कर, बोध ग्रहण कर, दीक्षा अंगीकार कर सौधर्म देवलोक के अन्दर देव उत्पन्न होगा, वहां से च्यवकर महाविदेह में जन्म लेगा, दीक्षा लेकर मोक्ष पद प्राप्त करेगा- इसका निक्षेप (निगमन) करना. दुःख विपाक के चौथे अध्ययन का यह अर्थ भगवन्त महावीर देव ने फरमाया-चौथा अध्ययन समाप्त हुवा.

टीकार्थः —निक्खेवो निक्षेपः- निगमन यानी पूर्णाहूति इस तरीके से करना- " एवं खलु जम्बू ! समणेणं भगवया महावीरेणं चउत्थस्स अज्झयणस्स अयमट्ठे पन्नत्ते " अर्थात् सुधर्म स्वामी फरमाते हैं- निश्चय करके इस प्रकार हे जम्बो ! श्रमण भगवन्त महावीर देव ने चौथे अध्ययन का यह अर्थ प्रकाशित किया, इस प्रकार समाप्त सूत्र कहना चाहिये; बाकी सब पहिले अध्ययन के माफिक व्याख्या कर लेना - चौथे अध्ययन का विवरण सम्पूर्ण हुवा.

❀ उपसंहार ❀

इस चौथे अध्ययन में सुभद्र सार्थवाह के पुत्र ' शकट ' की परिस्थिति करुणास्पद है - वैश्या गमन जैसे निर्लज्ज व्यवहार के कारण अग्निसमान तप्त लोहमय पुतली से आलिंगन और उससे कुत्ते की मौत मरने का चितार

सयाणीयस्स सोमदत्ते नामं पुरोहिए होत्था रिउवेय० तस्स णं सोमदत्तस्स पुरोहियस्स वसुदत्ता नामं भारिया होत्था तस्स णं सोमदत्तस्स पुत्ते वसुदत्ताए अत्तए वहस्सतिदत्ते नामं दारए होत्था, अहीण०

अर्थ—जो हे भगवन् ! चौथे अध्यन का श्रमण भगवन्त महावीरदेव ने यह अर्थ प्रकाशित किया तो पाँचवें अध्ययन का क्या अर्थ फरमाया ?; यह उत्क्षेप (प्रस्तावना) कहा; इस प्रकार जम्बूस्वामी के पूछने पर स्वधर्म गणधर देव बयान करते हैं – इस तरह निश्चय करके हे जम्बो ! उस काल उस समय में कौशाम्बी नगरी थी, ऋद्धिवाली–निर्भय और समृद्धिवाली थी; इस नगरी के बाहर चन्द्रोत्तरण उद्यान था, श्वेतभद्र नामक यक्ष था , उस कौशाम्बी नगरी में शतानीक नाम का राजा राज्य करता था, वह हिमवान् वग़ैरा जैसा बड़ा और सारभूत था , उसके मृगा–वती पट्टरानी थी, उस शतानीक का लड़का और मृगादेवी का पुत्र उदायन नाम का कुमार था, सम्पूर्ण शरीर वाला था, युवराज पद शोभित था; उस उदायन कुमार के पद्मावती नाम की भार्या थी, उस शतानीक राजा क सोम–दत्त नामक पुरोहित था, १ यजुर्वेद २ सामवेद ३ ऋगवेद और ४ अथर्ववेद पढा हुवा था; उस सोमदत्त पुरोहित के वसुदत्ता नाम की पत्नि थी, उस सोमदत्त का लड़का और वसुदत्ता का आत्मज ' बृहस्पतिदत्त ' नाम का लड़का था, उसका शरीर और इन्द्रियाँ अहीन थीं; यानी परिपूर्ण थीं.

टीकार्थः— ×× ×× ×× ×× ××

भगवन्त का पदार्पण—एक दयापात्र की पृच्छा
बृहस्पतिदत्त का जुल्मी पूर्वभव

मूल — तेणं कालेणं तेणं समएणं समणे भगवं महावीरे समोसरणं, तेणं कालेणं तेणं समएणं भगवं गोयमे तहेव जाव रायमग्गमोगाढे, तहेव पासइ हत्थी आसे पुरिसमज्झे पुरिसं चिंता, तहेव पुच्छति पुव्वभवं, भगवं वागरेति—एवं खलु गोयमा ! तेणं कालेणं तेणं समएणं इहेव जम्बुद्दीवे दीवे भारहे वासे सव्वतोभद्दे नामं नयरे होत्था रिद्धात्थिमियसमिद्धे, तत्थ णं सव्वतोभद्दे नयरे जियसत्तू नामं राया, तस्स णं जियसत्तुस्स रन्ना— महेसरदत्ते नामं पुरोहिए होत्था , रिउव्वेय जाव अत्थव्वण कुसले आवि होत्था.

अर्थ — उस काल उस समय में महावीर भगवन्त (इस नगरी के उद्यान में) समवसरे, उस काल उस समय

साथ युद्ध का प्रसंग आता तब २ महेश्वरदत्त पुरोहित १०८ ब्राह्मण पुत्रों को १०८ क्षत्रीय पुत्रों को १०८ वैश्य पुत्रों को और १०८ शूद्र पुत्रों को पकड़ाता था, पकड़ा कर उनके जीते हुवे के कलेजों का मांस लेकर जितशत्रु राजा के लिये शान्ति होम करता था, इससे शत्रु सैन्य शीघ्र ही नाश होजाता या छिन्न भिन्न होजाता।

टीकार्थ- ' हिययउंडिओ ' हृदय मांसापिण्डान् - कलेजों की मांसपेसियों को - निकलवाता था.

मूल-तते णं से महेसरदत्ते पुरोहिए एयकम्मे ० सुवहुं पावकम्मं समज्जिणित्ता तीसंवाससयं परमाउयं पालइत्ता कालमासे कालं किच्चा पंचमीए पुढवीए उक्कोसेणं सत्तरस सागरोवमट्ठिइए नरगे उववन्ने, से णं ततो अणंतरं उवट्टित्ता इहेव कोसंविए नयरीए सोमदत्तस्स पुरोहियस्स वसुदत्ताए पुत्तत्ताए उववन्ने, तते णं तस्स दारगस्स अम्मापियरो निवत्तवारसाहस्स इमं एयारूवं नामधेज्जं करेंति, जम्हा णं अम्हं इमे दारए सोम-दत्तस्स पुरोहियस्स पुत्ते वसुदत्ताए अत्तए तम्हाणं होउ अम्हं दारए वहस्सइदत्ते नामेणं।

अर्थ- पश्चात् वह महेश्वरदत्त पुरोहित इस प्रकार के कर्म वाला यानी व्यापार वाला (ऐसे ही कर्म में तत्पर- ऐसे कर्म की कला वाला- ऐसे ही आचरण वाला) होकर पाप कर्म उपार्जन कर तीन हजार वर्ष का उत्कृष्ट आयुष्य पालकर कालसमय काल करके पॉचवी नारकी में सत्तरह सागरोपम की उत्कृष्ट आयुष्य वाले नारकपने

(नेरइयेपने) उत्पन्न हुआ, अनन्तर वह वहां से अन्तर रहित निकल कर इसही कौशाम्बी नगरी में सोमदत्त पुरोहित की पत्नि वसुदत्ता की कूक्षि में पुत्रपने उत्पन्न हुआ; तब उस बालक के मात-पिता ने बारह दिन सम्पूर्ण होने पर इस प्रकार का (गुण- निष्पन्न) नाम स्थापन किया - इस कारण से कि हमारा यह लड़का सोमदत्त पुरोहित का पुत्र और वसुदत्ता का आत्मज है, उस कारण से हमारे पुत्र का नाम 'बृहस्पतिदत्त' हो.

टीकार्थ—

×× ×× ×× ×× ××

शतानीक राजा का मरण- और उदायन कुमार का राज्यारोहण

मूल—तते णं से वहस्सतिदत्ते दारए पंचधातिपरिग्गाहिए जाव परिवड्ढहि, ततेणं से वहस्सतिदत्ते उमु- क- बालभावे जुव्वणगमणुपत्ते विपणयपरिणयमेत्ते होत्था, से णं उदायणस्स कुमारस्स पियबालवयस्सए, यात्रि

भूमिकाओं में (बाग बगीचा – क्षेत्र – तालाव – आदि में) और रणवास में इच्छा प्रमाणे आने जाने लगा; तब वह बृहस्पति दत्त पुरोहित उदायन राजा के रानीवास में वक्त , बे वक्त, समय – बे समय और अकाल में (इन शब्दों के अर्थ टीकार्थ से जानना) जाता था, किसी एक वक्त पद्मावति रानी के साथ आसक्त हो गया, इससे उसके साथ उदार काम भोग भोगता हुवा रहता है.

टीकार्थ– ' वेलासु ' अवसरेषु – भोजन, शयनादि कालों में- ' अवेलासु ' अनवसरेषु – भोजनादि कालों से भिन्न कालों में ' काले ' तृतीय + प्रथमप्रहरादौ – तीसरी + पहिली पहर में ' अकाले च ' मध्यान्हादौ – दिन के मध्य भाग में, यह विशेष करके अकाल कहा जाता है. ' वियाले ' संध्यायां – शायंकाल मे ' संप्पलग्गो ' आसक्तः– मुग्ध + पञ्चमाध्ययनस्य विवरणं समाप्तम्.



अनाचार का फल

मूल— इमं चणं उदायणे राया ण्हाए जाव विभूसिए जेणेव पउमावई देवी तेणेव उवगच्छइ, वह-स्सतिदत्तं पुरोहियं पउमावई देवीए सद्धिं उरालाइं भोगभोगाइं भुंजमाणं पासति, पासित्ता आसुरुत्ते तिवलिं

भिउडिं साहट्टु वहस्सतिदत्तं पुरोहियं पुरुसेहिं गिण्हावेति २ त्ता जाव एए णं विहाणेणं वज्झं आणाविए, एवं खलु गोयमा ! वहस्सतिदत्ते पुरोहिए पुरापोराणाणं जाव विहरई ।

अर्थ — इस अवसर में उदायन राजा स्नान करके यावत् भूषणों से भूषित होकर जहां पर पद्मावती देवी है वहां पर आता है, वहां वृहस्पतिदत्त पुरोहित को पद्मावती देवी के साथ प्रधान काम-भोग भोगता हुवा देखा, देख कर क्रोधाक्रान्त हुआ तीन सलवाली भृकुटी चढ़ा कर उस पुरोहित को राजपुरुषों द्वारा पकड़ाया, पकड़ा कर यावत् इस विधान से (जो तुम देख कर आये हो) वध करने की आज्ञा दी; निश्चय करके इस प्रकार हे गौतम ! वृहस्पतिदत्त पुरोहित पूर्व कृत कर्मों को भोगता हुवा रहता है ।

टीकार्थः— ×× ×× ×× ×× ××

अन्तिम पृच्छा और उसका खुलासा

मूल—वहस्सतिदत्ते णं भंते ! दारए इओ कालगए समाणे कहिं गच्छिहिति ? कहिं उववज्जिहिति ?

❋ छट्ठा अध्ययन ❋

(नन्दिवर्धन अथवा नन्दिसेन)



अध्ययन का बीजक

मूल—जइ णं भंते ! छट्ठस्स उक्खेवो–एवं खलु जम्बू ! तेणं कालेणं तेणं समए णं महुरा नाम नयरी, भंडीरे उज्जाणे सुदंसणे जक्खे सिरीदामे राया बंधुसिरी भारिया, पुत्ते णंदिवद्धणे कुमारे अहीणे जुवराया, तस्स सिरीदामस्स सुबंधु नामं अमच्चे होत्था, सामदंडभेदउवप्पयाण नीईसु पउत्तनयविहन्नु, तस्स णं सुबंधुस्स अमच्चस्स बहुमित्ता नामं भारिया होत्था, अमच्चस्स बहुमित्तापुत्ते नामं दारए होत्था अहीण० तस्स णं सिरीदामस्स

रण्णो चित्ते नामं अलंकारीए होत्था, सिरीदामस्स रण्णो चित्तं बहुविहं अलंकारियकम्मं करेमाणे सव्वट्ठाणेसु य सव्वभूमियासु य अंतेउरे य दिन्नवियारे यावि होत्था ।

अर्थ— जम्बू स्वामी स्वधर्म स्वामी को पूछते हैं- हे भगवन् ! जो पाँचवें अध्ययन का इस प्रकार अर्थ फरमाया तो अब छट्ठे अध्ययन का बयान प्रकाशित करिये ! तब सुधर्म स्वामी फरमाते हैं — इस प्रकार निश्चय करके हे जम्बो ! उस काल उस समय में मथुरा नाम की नगरी थी, भंडीर नामक उद्यान था, उसमें सुदर्शन संज्ञक यक्ष था, यहां का श्रीदाम नामक राजा और बंधुश्री नाम की भार्या (रानी) थी, उनके नन्दिवर्धन नामक कुमार था, परिपूर्ण शरीर वाला युवराज था, उस श्रीदाम के सुबंधु नाम का अमात्य (मंत्री) था; वह साम - दंड - भेद और दान; (दाम) इन चार राजनीतियों में प्रवीण था, उस सुबंधु मंत्री के बहुमित्रा नाम की पत्नी थी, उस सुबंधु प्रधान के बहुमित्रापुत्र नाम का लड़का था, पूर्ण पंचेन्द्रीय शरीर वाला था, उस श्रीदाम राजा के चित्र नाम का अलंकारकर्म करने वाला नापित (नाई) था, श्रीदाम राजा का चित्र नाई आश्चर्यकारी नाना प्रकार के आलंकारिक कर्म (मुंडन - स्नान - वस्त्र - आभूषणादि) करता हुवा सर्व स्थानों में, सर्व प्रदेशों में और जनाने में राजा की आज्ञा से जाता आता था ।

टीकार्थ—' चित्त बहुविहं ' आश्चर्यभूतं बहुप्रकारं - अजीब नाना प्रकार का ' अलंकारियकम्मं ' क्षुरकर्म - मुंडन कार्य,

रस भरा, कितनेक में चूर्णादि से मिश्रित जल भरा, कितनेक में खारा तेल भरा; इस प्रकार तमाम तपे हुवे रसादि भर कर बडे २ कलशों द्वारा राज्याभिषेक किया; बाद तप्तलोहमय अग्निसमान हार लोह की संडासी से लेकर पहनाये, फिर अर्ध हार पहनाये, तथैव ललाट का पट्टा और मुकट पहनाया—यह देख कर गौतम स्वामी को पहिले अध्ययन की तरह विचार हुवा, भगवन्त को पूछा, प्रभु ने तथाप्रकार यावत् उत्तर दिया—

टीकार्थ—' कलकल भरिएहिं ' कलकलंभृतैः — चूर्णादिमिश्रितजल से भरे हुवे से (कलशों से) तपा हुवा लोहे का इत्यादि विशेषण जानना. ' हारं पिणद्धंति , हारं परिधापयन्ति— हार पहनाये ! क्या करके ? लोहमय संडासी से पकड़ करके, वहां हार अट्ठारह सरवाला जानना ' अद्धहारं ' अर्द्धहारं-नवसरवाला हार; यावत् करणसे " तिसरियं पिणद्धंति पालंबं पिणद्धंति कडिसुत्तयं पिणद्धंति" इत्यादि—तीन सर का हार पहनाया, झुबनक पहनाया, कन्दोरा पहनाया गया. ' पट्टं ' ललाटाभरणं—ललाड़ का आभूषण. ' मउडं ' शेखरकः— शिरका मुकुट. ' चिंता तहेव ' चिन्ता तथैव— उस ही प्रकार विचार किया; अर्थात् उस पुरुष को देख कर गौतम स्वामी को उस ही तरह विचार उत्पन्न हुवा जैसा पाहिले अध्ययन में हुआ थां , तथाहि—" न मे दिट्ठा नरया वा नेरइया वा, अयं पुण पुरिसे निरयपडिरूवियं वेयणं वेएइ " मैंने नरक और नारकों को (नैरईयों को) नही देखे फिर भी यह पुरुष नारक समान दुःख भोगता प्रतीत होता है; यावत् शब्द से ऐसा जानना—" अहापज्जत्तं भत्तपाणं पडिगाहेति २ त्ता जेणेव समणं भगवं तेणेव उवागच्छइ " चाहिये उतना आहार पानी ग्रहण किया, ग्रहण करके जहां श्रमण भगवन्त महावीर हैं वहां आते हैं; इत्यादि कहना चाहिये ' वागरेति '

जन्मान्तर में यह कौन था ? ऐसा गौतम गणधर के पूछने पर भगवान् फरमाते हैं–

नन्दिवर्धन का पूर्व भव

मूल—एवं खलु गोयमा ! तेणं कालेणं तेणं समएणं इहेव जंबुद्दीवे दीवे भारहे वासे सीहपुरे नामं नगरे होत्था रिद्धत्थिमियसमिद्धे, तत्थ णं सीहपुरे नयरे सीहरहे नामं राया होत्था, तस्स णं सीहरहस्स रन्नो दुज्जोहणे नामे चारगपालए होत्था, अहम्मिए जाव दुप्पडियाणंदे.

अर्थ— निश्चय करके इस प्रकार हे गौतम ! उसकाल में उस समय में इस ही जम्बूद्वीप नामक द्वीप में भरतक्षेत्रान्तरगत सिंहपुर नामका नगर था, रिद्धिवाला–निर्भय और समृद्धिशाली था, उस सिंहपुर नगर में सिंहरथ नामक राजा था, उस सिंहरथ राजा के दुर्योधन नामक कोतवाल था, अधर्मी यावत् दूसरों को दुःख देकर आनंद मानने वाला था।

टीकार्थः — 'चारगपालए' गुप्तिपालकः– कोतवाल.

की लकड़ियां, बेतें, आमली की सोटियाँ, कोमल चमड़े के चाबुक, चमड़ा थींटी हुई सोटियां, वटवृक्षादि की छाल बींटी हुई लकड़ियाँ, इनके सिखर बंद समूह और छुट्टे ढेर उसके पास रहे हुवे थे-उस दुर्योधन कोतवाल के पास बहुतसी शिलाएँ, लकड़ियाँ, मुद्गर और कनङ्गर यानी जहाज को जल में स्थिर करने वाले नाङ्गर नाम के पत्थर; इनके शिखर बंद ढेर और छोटे २ पुंज थे.

टीकार्थः - 'हत्थुं डुयाण' अण्डूनि-काष्टादि के बने हुवे बंधन विशेष; इस तरह पादान्दुकानि- पग के बंधन विशेष. 'हडीण य' हडयः + खोटकाः- खोड़े. 'पुंज' निकरः- शिखरबंदराशी. 'निगर' राशिमात्रम् छुट्टे ढेर. 'वेणुलयाण य' स्थूलवंशलतानां-जाड़े बांसों की वेलों के 'वेत्तलयाण य' बेत की बेलों के 'चिंच' अम्बलिकाकम्बानां-आमली की सोटियों के 'छियाण' श्लक्ष्णचर्म-कशानां-कोमल चर्म के चाबुकों के. 'कसाण य' चर्मयष्टिकानां-चमड़े से मढीहुई लकड़ियों के. 'वायरासीणं' वल्करश्मयः-बड़ बगैरा की छाल से बींटी हुई सोटियों के; मार मारने को ढेर के ढेर लगे हुवे थे. 'सिलाण य' दृषदां- सिलाओं के. 'लउलाण य' लगुडानां-लाठियों के. 'मुग्गराण य' मुद्गराः-मुद्गरों के. 'कनंगराण य' कनङ्गराः-पानी के लिये नङ्गर यानी जहाजों को निश्चल करने वाले पाषाण वे कनङ्गरा अथवा कानंगरा कहे जाते हैं; उनके ढेर.

मूल - तस्स णं (तए णं से) दुज्जोहणस्स चारगस्स बहवे तंताण य वरत्ताण य वागरजाण य वालयसुत्तरज्जूण य पुंजानिगरा चिट्ठंति - तस्स णं दुज्जोहणस्स चारगस्स बहवे असिपत्ताण य करपत्ताण य खुर-

पत्ताण य कलंबचीरपत्ताण य पुंजाणिगरा चिट्ठंति—तस्स णं दुज्जोहणस्स चारगस्स बहवे लोहखीलाण य कडगसक्कराण य चम्मपट्टाण य अल्लपल्लाण य पुंजा निगरा चिट्ठंति—तस्स णं दुज्जोहणस्स चारगस्स बहवे सूतीण य डंभणण य कोट्टिल्लाण य पुंजा निगरा चिट्ठंति—तस्स णं दुज्जोहणस्स चारगस्स बहवे सत्था (पच्छा) ण य पिप्पलाण य कुहाडाण य नहच्छेयणाण य दब्भत्तिणाण य पुंजा निगरा चिट्ठंति.

अर्थः—उस दुर्योधन कोतवाल के पास बहुत सी तांतें (महीन डोरियाँ,) जाड़ी डोरियाँ, चमड़े की डोरियाँ, बाल और सूत के रस्सों के पुंज और निकर रक्खे हुवे थे—उस दुर्योधन गुप्तिपालक के पास बहुत सी तलवारें, करवतें, उस्तरे जैसे शस्त्र और कलम्बचीर (शस्त्रविशेष) के ढेर और छुट्टे ढेर लगे हुवे थे—उस दुर्योधन चारक के पास बहुत से लोहे के खीले, बाँस की मेखें, चमड़े के पट्टे और बिच्छी की आकृती जैसे खिलियों के पुंज और निकर लगे हुवे थे—उस दुर्योधन कोतवाल के पास बहुतसी सुइयाँ, लोहे की पतली और तीखी सलियाँ तथा लोहे के छोटे २ मुद्गरों के ढेर के ढेर लगे हुवे थे—उस दुर्योधन गुप्तिपालक के पास बहुत से पृच्छनक नाम के शस्त्र छोटे २ उस्तरे, कुहाड़े, नेरणी (नख काटने का शस्त्र) और डाभ वगैरा के पुंज—निकर लगे हुवे थे.

टीकार्थः— 'असिपत्ताण य' असीनां—तलवारों के. 'करपत्ताण य' क्रकचानां—करवतों के. 'खुरपत्ताण य' उस्तरों के.

जाव सत्थोवाडियं करेति अप्पेगतिए वेणुलयाहि य- जाव वायरासीहि य हणावेति ।

अर्थ—कितनेक अपराधियों को चित्ता पटकाता था, चित्ता पटका कर घोड़े का मूत्र पिलाता था, कितनेक को हाथी का मूत्र पिलाता, यावत् (उपरोक्त सर्व मूत्रादि) भेड़ का मूत्र पिलाता था– कितनेक को ऊंधा पटकवा कर सड़ २ शब्दों से वमन (उल्टी) कराता था, कितनेक को मस्तक पर उन ही मूत्र के कुंडे रखा कर दुःख देता था – कितनेक को हस्तबंधनों से बंधवाता था, कितनेक को पगबंधनों से बंधवाता था, कितनेक को हथकड़ियाँ पहिनाता था, कितनेक को बेडियाँ पहनाता था, कितनेक के शरीर इकट्ठे करके (सुकड़ा कर) जकड़ कर बंधवाता था, कितनेक को सांकलों से बंधवाता था – कितनेक के हाथ छेदन कराता था, 'यावत् (कितनेक के पैर – नाक – होट– जीभ– मस्तक छेद कराता था) शस्त्र द्वारा छेदन कराता था– कितनेक को बांस की सोटियों से यावत् (वेंतों से–आमली की लकड़ियों से – चमड़े के चाबुकों से – चमड़ा वींटी हुई सोटियो से) वृक्षादिक की छाल से बनी लकड़ियों से पिटवाता था.

टीकार्थ—' अप्पेगइया णं तेणं चेव उविलं दलयति ' कितनेक को उन ही मूत्र कुंडों से (मस्तक पर रखवा कर) तकलीफ देता था. ' संकोडिय मोडिय ' सकोचिताश्च मोटिताश्च – संकुचित अंग और चलिताङ्ग. ' अप्पेगइए हत्थ छिन्नए करेति ; यावत् करण से ऐसा देखा जाता है– "पायछिन्नए एवं नक्कउट्ठजिब्भ सीसाछिन्नए " इन सब का अर्थ मूल में लिख दिया गया है – ' सत्थोवाडि–

यए' शस्त्रावपाटितान् – तलवार वग़ैरा शस्त्र से विदारण किये हुवे. अप्पेगइया वेणुलयाहि' यहां पर यावत् करण से – 'वेत्तलयाहि य चिंचलयाहि" इत्यादि. इनका अर्थ मूलार्थ में उल्लिखित है.

मूल — अप्पेगइए उत्ताणए कारवेति उरे सिलं दलावेति तओ लउलं छुभावेइ २ त्ता पुरिसेहिं उक्कंपावेति अप्पेगइए तंतीहि य जाव सुत्तरज्जूहि य हत्थेसु पायेसु य बंधावेति अगडंसिओचूलयालंग पज्जेति अप्पेगइए असिपत्तेहि य जाव कलंबचीरपत्तेहि य पच्छावेंति खारतेल्लेणं अब्भिगावेति अप्पेगइए निडालेसु य अवदूसु य कोप्परेसु य जाणुसु य खलुएसु य लोहकीलिएसु य कडसक्काराओ य दलावेंति अलए भंजावेंति अप्पेगइए सुतीओ य दंभणाणि य हत्थंगुलियासु य पायंगुलियासु य कोट्टिल्लएहिं आउडावेति २ त्ता भूमिं कंडूयावेति अप्पेगइए सत्थेहि य जाव नहच्छेदणेहि य अंगं पच्छावेइ दब्भेहि य कुसेहि य उल्लवद्धेहि य वेढावेति आयबंसि दलयति सुक्के समाणे चडचडस्स उप्पाडेंति ।

अर्थ—कितनेक को चित्ता कराता था फिर उनकी छातियों पर सिलाओं रखवाता था उसके ऊपर एक बडा लक्कड़ रखा कर दोंनों तर्फ पुरुषों से चिरवाता था, कितनेक को तांतों द्वारा यानी महीन डोरी से (जो कि चमड़ी में घुस जाय) यावत् (जाड़ी डोरी से – चमड़े की डोरी से – बाल की डोरी से) सूत के रस्सों से हाथ–पेर बंध-

अर्थ – तत्पश्चात् वह दुर्योधन कोतवाल ऐसे कृत्यों से अत्यन्त पाप कर्म बांध कर इकत्तीस सौ वर्ष की पूरी आयुष पाल कर काल समय काल करके छट्टी पृथ्वी में (छटी नारकी मे) बावीस सागरोपम के उत्कृष्ट आयुष्य वाले नारक पने उत्पन्न हुवा.

टीकार्थ— ×× ×× ×× ×× ××

मूल — से णं ततो अणंतरं उवट्टित्ता इहेव महुराए णगरीए सिरीदामस्स रण्णो वंधुसिरीए देवीए कुच्छिंसि पुत्तत्ताए उववन्ने, तते णं वंधुसिरी णवण्हं मासाणं बहुपडिपुन्नाणं जाव दारगं पयाया, तते णं तस्स दारगस्स अम्मापियारो निव्वत्ते वारसाहे इमं एयारूवं नामधेज्जं करेंति होउ णं अम्हं दारगाणं नंदिसेणे नामेणं, तते णं से नंदिसेणे कुमारे पंचधातीपरिवुडे जाव परिवुड्ढइ, तते णं से नंदिसेणे कुमारे उम्मुक्कबाल भावे जाव विहरति, जोव्वणगमणुपत्ते जुवराया जाते यावि होत्था।

अर्थ — तदनन्तर वह वहां से निकल कर इस ही मथुरा नगरी में श्रीदामराजा की वंधुश्री रानी की कुक्षि-मे पुत्रपने उत्पन्न हुवा, वाद वंधुश्री को नौ मास परिपूर्ण होने पर यावत् पुत्र का जन्म हुवा, तब उस लड़के के मात-पिताने बारह दिन व्यतीत होने पर यह इस प्रकार का नाम रक्खा–हमारे पुत्र का नाम 'नन्दिसेन' हो, अब

वह नंदिसेन कुमार पांच धायमाताओं से युक्त होकर बड़ा होने लगा, तब वह नंदिसेन कुमार बाल भाव से मुक्त होकर यावत् युवा अवस्था में विचरता था और युवराज पद को प्राप्त होगया था।

टीकार्थ— ×× ×× ×× ×× ×

लोभांधता से पुत्र का पिता के प्रति जुलमी विचार

उग्र पाप का प्रत्यक्ष फल

मूल— तते णं से णंदिसेणे कुमारे रज्जे य जाव अंतेउरे य मुच्छित्ते इच्छति सिरीदामं रायं जीवियातो ववरोवित्तए सयमेव रज्जसिरिं कारेमाणे पालेमाणे विहरित्तए, तते णं से णंदिसेणे कुमारे सिरीदामस्सरन्नो बहूणि अंतराणि य छिद्दाणि य विवराणि य पडिजागरमाणे विहरति, तते णं से नंदिसेणे कुमारे सिरीदामस्स रन्नो अंतरं अलभमाणे अन्नया कयाइं चित्तं अलंकारियं सद्दावेति २ त्ता एवं वयासी.

अर्थ—तदनन्तर उस चित्त नामक नापित ने नन्दिसेन कुमार की यह बात सुनी तब उस के दिल में ऐसा विचार उत्पन्न हुवा—"यदि मेरे इस विचार को राजा जान लें तो मैं नहीं जान सकता कि मुझे किस बुरी मौत से मारें ?" इस तरह भयभीत होकर जहां पर श्रीदाम राजा है वहां पर आता है, आकर के श्रीदाम राजा को एकान्त में गुप्तपने हाथ जोड़कर इस तरह निवेदन किया—निश्चय करके इस प्रकार हे स्वामिन्! नन्दिसेन कुमार राज्य में यावत् (ऊपर का हकीकत कही) आसक्त हुवा है, इसलिये आप को जीते को मरवा कर स्वयं राज्य लक्ष्मी भोगता हुवा और पालता हुवा विचरना चहाता है.

टीकार्थ— ×× ×× ×× ×× ××

मूल—तते णं से सिरिदामे राया चित्तस्स अलंकारियस्स अंतिए एयमट्ठं सोच्चा निसम्म आसुरुत्ते जाव साहट्टु णंदिसेणं कुमारं पुरिसेहिं सद्धिं गिण्हावेति एएणं विहाणेणं वज्झं आणवेति, तं एवं खलु गोयमा! णंदिसेणे पुत्ते जाव विहरति.

अर्थ—पश्चात् श्रीदाम राजा ने चित्त नापित के पास से यह समाचार सुने सुनकर तत्काल क्रोधाक्रान्त हुवा भृकुटी चड़ाकर नन्दिसेन कुमार को राजपुरुषो द्वारा पकड़वा लिया और इस प्रकार से (तुमने देखा उस तरह) वध

करने की आज्ञा दी, इस प्रकार निश्चय कर हे गौतम ! वह नंदिसेन पुत्र दुःखों को भोगता हुवा रहा है।

टीकार्थ— ×× ×× ×× ×× ××



आखरी खुलासा

मूल—नंदिसेणे कुमारे इओ चुए कालमासे कालं किच्चा कहिं गच्छिहिइ – कहिं उववज्जिहि ? गोयमा ! णंदिसेणे कुमारे सट्ठी वासाइं परमाउयं पालइत्ता कालमासे कालं किच्चा इमिसे रयणप्पभाए पुढवीए संसारो तहेव, ततो हत्थिणाउरे णगरे मच्छत्ताए उववज्जिहिति, सेणं तत्थ मच्छीएहिं वधिए समाणे तत्थेव सेट्ठिकुले बोहिं सोहम्म कप्पे महाविदेहे वासे सिज्झिहिति बुज्झिहिति मुच्चिहिति परिनिव्विहिति सव्वदुक्खाणमंतं करोहिति, एवं खलु जंबू ! निक्खेवो — छट्ठस्स अज्झयणस्स अयमट्ठे पन्नत्तिबेमि। (सू० २७)

छट्ठमज्झयणं सम्मत्तं ॥ ६ ॥

❋ सातवाँ अध्ययन ❋

(उम्बरदत्त)



मूल—जइ णं भंते ! उक्खेवो सत्तमस्स –एवं खलु जंबू! तेणं कालेणं तेणं समएणं पाडलसंडे णगरे वणसंडे नाम उज्जाणे उम्बरदत्तो जक्खो, तत्थ णं पाडलसंडे णगरे सिद्धत्थे राया तत्थ णं पाडलसंडे णगरे सागरदत्ते सत्थवाहे होत्था अड्ढे० गंगदत्ता भारिया, तस्स णं सागरदत्तस्स पुत्ते गंगदत्ताए भारियाए अत्तए उंवरदत्ते नामं दारए होत्था अहीण जाव पंचिंदियसरीरे .

अर्थ— जम्बू स्वामी सुधर्म स्वामी से प्रार्थना करते हैं कि हे भगवन्! जो छट्ठे अध्ययन का आपने यह अर्थ प्रकाशित किया तो अब कृपा कर सातवें अध्ययन का उत्क्षेप (प्रस्तावना – विस्तार) फरमाईयेगा – तब सुधर्म गणधर भगवान् इस प्रकार बोले—निश्चय करके इस कद्र हे जम्बो! उस काल उस समय में पाटलखंड नाम का

नगर था, वनखण्ड नामक उद्यान था, उसमें उम्बरदत्त नाम का यक्ष था, इस नाम का यक्षायतन था, उस पाटलखंड नगर में सिद्धार्थ संज्ञक राजा राज्य करता था, उस ही पाटलखंड नगर में सागरदत्त सार्थवाह रहता था, वह धनाढ्य सेठ था, उसके गंगदत्ता भार्या थी, उस सागरदत्त का पुत्र और गंगदत्ता का आत्मज (जायन्दा) उम्बरदत्त नाम का लड़का था, अहीन यावत् पूर्ण पंचेन्द्रिय शरीर वाला था.

टीकार्थ — 'जइणं भंते!' जो हे भगवन्! इत्यादि सातवें अध्ययन का उत्क्षेप (विस्तार) कहना.

गौतम स्वामी एक दुःखी भिखारी को देखते हैं

मूल — तेणं कालेणं तेणं समएणं समोसरणं जाव परिसा पडिगया, तेणं कालेणं तेणं समएणं भगवं गोयमे तहेव जेणेव पाडलसंडे णगरे तेणेव उवागच्छाति पाडलसंडं णगरं पुरत्थिमिल्लेणं दुवारेणं अणुप्पविसति तत्थणं पासति एगं पुरिसं कच्छुल्लं कोढियं दोउयरियं भयंदरियं अरिसिल्लं कासिल्लं सासिल्लं सोगिलं

"भत्तपाणं आलोएइ २ त्ता भत्तपाणं पडिदंसइ २ त्ता समणेणं भगवया अब्भणुन्नाए समाणे" यानी आहार पानी की आलोचना करते हैं, आलोचना करके भातपानी प्रभु को दिखाते हैं, दिखा कर श्रमण भगवन्त की आज्ञा प्राप्त कर; इत्यादि जानना.

मूल — तदा भगवं गोयमं उच्चनीय जाव अडति अहापज्जत्तं गिण्हति २ त्ता पाडलीसंडाओ नगराओ पडिनिक्खमति २ त्ता जेणेव समणे भगवं० (शेष पाठ ऊपर के टीकार्थ में) भत्तपाणं आलोएति २ त्ता भत्तपाणं पडिदंसेति २ त्ता समणेणं भगवया अब्भणुन्नाए समाणे जाव विलमिव पन्नगभूते (अप्पाणेणं आहारमाहारेइ) संजमेणं तवसा अप्पाणं भावेमाणे विहरति.

अर्थ — तब वैराग्यपद शोभित गौतम स्वामी (नगर में आहार के लिये) ऊंच-नीच यावत् (मध्यम) घरों मे भ्रमण करते थे, ज़रूरत जितना आहार लिया, लेकर पाडलीखण्ड नगर से वापिस निकलते हैं, निकलकर जहां पर श्रमण भगवन्त. (महावीर विराजते हैं वहीं पर आते हैं आकरके) भात पानी की आलोचना करते हैं, करके भगवन्त को आहार पानी दिखाते हैं, दिखाकर श्रमण भगवन्त की आज्ञा प्राप्तकर यावत् बिलके माफिक यानी बिल में सर्पप्रवेशवत् (विशेष अर्थ टीकार्थ में) आपने आहार किया; पश्चात् संयम-तप से आत्मभावना करते हुवे रहते हैं.

टीकार्थ—'विलमिव पन्नगभूए अप्पाणेणं आहारमहारेइ' अर्थ मूलार्थ के माफिक. क्या होकर ? कहते हैं कि—नाग होकर यानी सर्प के आचार के माफिक भगवान् गौतम आहार का रसास्वाद नही करने से नही चबाते हैं इससे, किस प्रकार का आहार ? स्पर्श नहीं करने से बिलके माफिक; तात्पर्य यह है कि—सर्प बिलको नहीं छूता हुवा उसमें अपने को प्रवेश करता है, इस ही प्रकार गौतम स्वामी रस का स्वाद नहीं लेने के कारण आहार को जिव्हा से और दान्तों से स्पर्श नहीं करते हुवे भोजन करते हैं *.

मूल—ततं णं से भगवं गोयमे दोच्चंपि छट्ठक्खमण पारणगंसि पढमाए पोरसिए सज्झाए जाव पाडलिसंडं नगरं दाहिल्लेणं दुवारेणं अणुप्पाविसति तं चेव पुरिसं पासति कच्छुल्लं तहेव जाव संजमेणं तवसा

---

* सर्प बिल में प्रवेश करे उस तरह मुनि महात्मा आहार करें, अर्थात् बिल में प्रवेश करते समय सर्प बिल को नही छूता, ठीक उस ही तरह मुनि गौचरी करते समय आहार का निवाला दाँतों को और जीभ को स्पर्श न हो उस तरह मुंह में रक्खे कि रखते ही गट उतर जाय, मतलब कि रस के स्वाद का त्यागी मुनि भोजन को न दान्तों से चबावे न जबान से स्वाद ले—अगर यहां कोइ शंका करे कि इस तरह आहार करने की आज्ञा में स्वास्थ्य रक्षा का खयाल नही रक्खा गया क्योंकि बिना चबा कर खाने से अजीर्ण होगा और उससे नानाविध रोग उत्पन्न होंगे, जिससे संयम पालने में वाधा पहूँचेगी, इत्यादि—उत्तर में निवेदन है कि तपस्वी मुनिजनों की जठराग्नि बड़ी दिप्तिमान् होती है, वास्ते चबाया हुवा और बिना चबाया हुवा सब आहार अच्छी तरह पाचन हो आता है; अतएव स्वास्थ रक्षा में जरा भी आपत्ति न होगी।

वाला (शष सब ऊपर के अनुसार) एक पुरुष यावत् भिक्षा माँगता हुवा देखा, फिर मैने दूसरे छठक्षमण के पारणे दक्षिण दिशा के दरवाजे में प्रवेश करते उसी तरह उसको देखा, बाद तीसरे छट्टक्खमण के पारणे पश्चिम दिशा के दरवाजे में प्रवेश करते उस पुरुष को उसही कदर देखा, पश्चात् चौथे बेलेके पारणे में उत्तर दिशा के दरवाज़े में प्रवेश करते उस खुजली बग़ैरा के रोग वाले आदमी को उस ही तरह यावत् भिक्षा मांगता हुवा देखा; उस को देख कर मुझे विचार उत्पन्न हुवा, इस प्रकार सब हक़ीक़त कहकर गौतम गणधर ने उस पुरुष का पूर्वभव पूछा, तब भगवन्त महावीर स्वामी ने इस प्रकार फ़रमाया-

टीकार्थ — ×× ×× ×× ×× ××

मूल—एवं खलु गोयमा! तेणं कालेणं तेणं समएणं इहवे जम्बूदीवे दीवे भारहे वासे विजयपुरे नाम नगरे होत्था रिद्धत्थिमियसमिद्धे०, तत्थ णं विजयपुरे णगरे कणगरहे नामं राया होत्था, तस्स णं कणगरहस्स रन्नो धन्नंतरी नामं विज्जे होत्था, अट्ठगाउव्वेयपाठए, तंजहा—कुमार भिच्चं १ सालागे २ सल्लकहत्ते ३ कायेतिगिच्छा ४ जंगोले ५ भूयविज्जे ६ रसायणे ७ वाजीकरणे ८ सिवहत्थे सुवहत्थे लहुहत्थे।

अर्थ — निश्चय करके इस प्रकार हे गौतम! उस काल उस समय में इस ही जम्बुद्वीप नामक द्वीप में भरत-

क्षेत्रान्तरगत विजयपुर नाम का नगर था रिद्धिवाला निर्भय और समृद्धिशाली था, उस विजयपुर नगर में कनकरथ नाम का राजा राज्य करता था उस कनकरथ राजा के धनवन्तरी नाम का वैद्य था, वह अष्टाङ्ग (आठ अङ्ग वाला) आयुर्वेद पढा हुवा था. वे आठ अङ्ग इस प्रकार हैं- १ कुमारभृत्य यानी बालक का पोषण करने वाला शास्त्र २ शालाक्य यानी शलाका (शलाई) कर्म का प्रतिपादन करने वाला शास्त्र ३ शल्यहत्य यानी शलको बाहार निकालने वाला शास्त्र ४ कायचिकित्सा यानी शरीरके रोगों का इलाज करनेवाला शास्त्र ५ जंगोल अर्थात् ज़हर को नाश करने वाला शास्त्र ६ भूतविद्या अर्थात् भूतादि निग्रह करने वाला शास्त्र ७ रसायन यानी अमृत-रस की प्राप्ति कराने वाला शास्त्र ८ वाजीकरण अर्थात् अश्व जैसा ताक़तवर बनाने वाला शास्त्र, इस पठन के अतिरिक्त उस का हाथ आरोग्य करने वाला, सुख करने वाला और दक्ष हाथ था-अष्टाङ्ग का विशेषार्थ टीकार्थ में लिखा जायगा।

टीकार्थ—'अट्ठंगाउव्वेयपाढए' आयुर्वेद:- वैद्यक शास्त्र 'कुमारभिच्च' कुमारभृत्यं-बालकों का पोषक, अर्थात् बच्चों के पोषण में उत्तम शास्त्र-दूध के दोषों को शोधने वाला और दोष वाले दूध से उत्पन्न व्याधियों का नाश करने वाला. १ 'सलाग' शालाक्यं-शलाई से किये जाने वाले काम का बताने वाला शास्त्र, अर्थात् कान मुख वग़ैरा में होते हुवे रोगों को तथा ऊपर (कण्ठमाला-का स्थान) जन्तुओं में रहे हुवे रोगों को (शली के प्रयोग से) नाश करने वाला. २ 'सल्लहत्ते' शल्यहत्यं-शरीर के किसी भी

तलेहि य भजेहिं य सुरं च आसाए माणे विसाएमाणे विहरति।

अर्थ—तत्पश्चात् वह धन्वन्तरी वैद्य विजयपुर नगर में कनकरथ राजा को उसके रणवास की स्त्रियों को और दूसरे बहुतसे राजा, ईश्वर (धनाढ्य) यावत् सार्थवाह को तथा अन्य बहुतेरे दुर्बल (कमजोर) ग्लान, व्याधित रोगी, अनाथ, सनाथ, श्रमण (गैरिकादि साधु) ब्राह्मण, सामान्य भिक्षु (भिखारी), कापालिक, कार्पटिक (चींथरे पहन कर भिक्षा मांगने वाले) इन सब रोगग्रस्तों में से कितनेक को मच्छ का मांस खाने का उपदेश देता था; कितनेक को काछवे का मांस, कितनेक को ग्राह का मांस, कितनेक को मगर का मांस, कितनेक को सुंसुमार (पाड़े जैसा एक जलचर) का मांस, कितनेक को बकरे का मांस इस ही प्रकार भेड़–रोझ–सुवर–हरण–ससले का तथा गाय का मांस, भेंसे का मांस खाने को कहता था; कितनेक को तीतर का मांस, कितनेक को वर्त्तक पक्षी का मांस–लावक (पक्षीविशेष) का मांस कबूतर का मांस–मोर का मांस खाने का कहता था; और बहुतसे जलचर–स्थलचर–खचर (जल में चलने वाले–ज़मीन पर चलने वाले–आकाश में उड़ने वाले) के मांस खाने का उपदेश करता था; अर्थात् औषधि रूप खाने का कहता था–आप खुद धन्वन्तरी वैद्य उन बहुत से मच्छ के मांस यावत् मोर के मांस तथा अन्य बहुत से जलचर– स्थलचर–खचर जीवों के मांस सेककर, तलकर, भुंजकर, मदिरा के साथ मिला कर एक बार आस्वादन करता हुवा, वारंवार आस्वादन करता हुवा निवास करता था.

टीकार्थ—'राइसर' इस से यहां पर यावत् शब्द से-"तलवरमाडंबियकोडुंबियसेट्ठी" अर्थात् कोतवाल-मण्डपनिवासी-बहुकुटुम्बी और सेठजन. 'दुब्बलाण य' हीनबलानां-दुर्बलों को. 'गिलाणाण य' ग्लानानां-क्षीणहर्षवाले को यानी शोक से उत्पन्न पीड़ावालों को. 'वाहियाण य' व्याथिता + व्याथिता तेषां-जिनको बहुत काल का कोढ बगैरा रोग हो और गर्मी आदि से पीड़ाते हों उनको. 'रोगियाणं' रोगिनां-दीर्घकाल से ज्वरादि उत्पन्न हुवे हों उनको. इस प्रकार के किनको ? 'सणाहाण य' सनाथानाम्-नाथ सहितों को. 'अणाहाण य' अनाथानाम्-नाथरहितों को. 'समणाण य' गैरिकादीनां-गैरु में रंगे हुवे कपड़े पहनने वाले साधुओं को यानी सन्यासी बगैरा को. 'भिक्खगाण य' भिक्षुकानाम् -दूसरे भिखारियों को. 'करोडियाण य' कापालिकानां हाथ में खप्पर रखकर भिक्षा मांगने वाले को. 'आउराणां' चिकित्सा के योग्य न हो उनको. 'अप्पेगइयाणं मच्छमंसाइं उवइसति' इस वाक्य के अनुसार आगे के वाक्य भी ग्रहण करना. मत्स्य-कच्छपादि सब मूलार्थ के माफिक जानना.

मूल—तते णं से धन्नंतरी विज्जे एयकम्मे सुबहुं पावकम्मं समज्जिणित्ता बत्तीसं वाससयाइं परमाउयं पालइत्ता कालमासे कालं किच्चा छट्ठीए पुढवीए उक्कोसेणं बावीससागरोवमाओ उववण्णे; तते णं गंगदत्ता भारिया जायणिंदुया यावि होत्था जाया जाया दारगा विनिधायमावज्जंति, तते णं तीसे गंगदत्ताए सत्थवाहीए अन्नया कयाइं पुव्वरत्तावरतकालसमयंसि कुडुंबजागरियं जागरमाणीए अयं अज्झत्थिए समुप्पन्ने।

पान से लेकर मधुर—कोमल संलाप तक सब का अर्थ मूलार्थ के अनुसार समझना—'अपुन्न' अविद्यमानपुण्या—जिसके पुण्यउदय नहीं. 'अकयपुन्न' अकृतपुण्या—जिसके पूर्व में पुण्य किये हुवे नहीं. 'अपुन्न' अपूर्णः—पूर्ण मनोरथ नहीं होने से. 'एत्तो' एतेषां—इन बालक चेष्टाओं को. 'एगयरमवि' एकतरपि + अन्यतरदपीति—एक भी या दूसरा भी, इत्यादि.

मूल—तं सेयं खलु मम कल्लं जाव जलंते सागरदत्तं सत्थवाहं आपुच्छित्ता सुबहुं पुप्फवत्थगंधमल्लालंकारं गहाय बहुमित्तणाइणियगसयणसंबंधिपरिजनमहिलाहिं सद्धिं पाडलसंडाओ णगराओ पडिनिक्खमित्ता बाहिया जेणेव उंबरदत्तस्स जक्खस्स जक्खायतणे तेणेव उवागच्छइ उवागच्छित्ता तत्थ णं उंबरदत्तस्स जक्खस्स महारिहं पुप्फच्चणं करेइ करेइत्ता जाणुपायवडियाए ओयावित्तए।

अर्थ—वह मेरे को कल्याणकारी है कि—निश्चय करके कल यावत् सूर्योदय होने पर सागरदत्त सार्थवाह को पूछकर बहुत से पुष्प—वस्त्र—गंध—माला—अलङ्कार लेकर के बहुत से मित्र—ज्ञाति—निजक स्वजन—सम्बंधी और परिजन की महिलाओं के साथ पाडलखण्ड नगर से निकलकर बाहार जहां उम्बरदत्त यक्ष का यक्षभुवन है वहां जाना, जाकर वहां पर उम्बरदत्त यक्ष की वहाँ के योग्य पुष्प पूजा करूं, करके घूटनों से उनके पेर में पड़कर इस प्रकार की मानता करूं—

टीकार्थ — 'कल्लं' कल्यं-कल. यहां पर यावत् करणसे "पाउप्पभायाए रयणीए फुल्लुप्पलकमलकोमलुम्मिलिए अहपंडुरे पभाए" इत्यादि जानना "उट्ठिए सहस्सरस्सिमि दिणयरे तेयसा जलंते" अर्थात् प्रातःकाल में प्रकाश होने पर, कमलपत्र विकस्वर होने पर, हरण के नेत्र कोमलता से खुलने पर, प्रभात उज्ज्वल होने पर तथा उदयप्राप्त सहस्त्रकिरण सूर्यतेज से जाज्वल्यमान होने पर.

मूल — जतिणं अहं देवाणुप्पिया ! दारगं वा दारियं वा पयामि तो णं अहं तुब्भं जायं च दायं च भायं च अक्खयणिहिं च अणुवड्ढइस्सामित्तिकट्टु ओवाइयं ओवाइणित्तए, एवं संपेहेइ २ त्ता कल्लं जाव जलंते जेणेव सागरदत्ते सत्थवाहे तेणेव उवागछाति २ त्ता सागरदत्तं सत्थवाहं एवं वयासी — एवं खलु अहं देवाणुप्पिया ! तुब्भेहिं सद्धिं जाव न पत्ता, तं इच्छामिणं देवाणुप्पिया तुब्भेहिं अब्भणुण्णाया जाव उवाइणित्तए, तएणं से सागरदत्ते गंगदत्तं भारियं एवं वयासी — ममंपि णं देवाणुप्पिए ! एसचेव मणोहरे कहं णं तुमं दारगं वा दारियं वा पयाएज्जासि ? गंगदत्ताए भारियाए एयमट्ठं अणुजाणति ।

अर्थ — हे देवानुप्रिय ! जो मैं पुत्र वा पुत्री को जन्म दुं तो मैं आपके याग की (पूजा की) अथवा यात्रा की, दान की, भागकी (लाभ में से अमुक हिस्से की) और देव भंडार की वृद्धि करूंगी, ऐसा करके मेरी मानता माननी कल्याण कारी है; ऐसा उसने विचार किया, विचार करके दूसरे दिन प्रातःकाल में सूर्योदय होने पर जहां सागरदत्त

किये, करके जहां उम्बरदत्त यक्ष का यक्षायतन है वहां पर आती है, आकर उम्बरदत्त यक्ष को देखते ही प्रणाम किया, करके मोरपीछी को हाथ में ली, लेकर उम्बरदत्त यक्ष को मोरपीछी से प्रमार्जन किया, प्रमार्जन करके जल धारा से स्नान कराया, कराकर बारीक–कोमल सुगंधी वस्त्र से शरीर को पूँछा यानी अंगलूहना किया, करके यक्षप्रतिमा को सपेत वस्त्र पहनाया, पहनाकर बड़ों के योग्य पुष्पारोहण–वस्त्रारोहण–मालारोहण–गंधारोहण और चूर्णारोहण किया अर्थात् ये सब चीजें चढ़ाई तथा धूप खेवा (दीपक किया) इत्यादि पूजन करके घुटनों के बल नीचे झुक कर इस प्रकार बोली–हे देवो के प्यारे ! जो मैं पुत्र या पुत्री को जन्म दुं तो आप की (ऊपर के अनुसार) सेवा करूंगी ! इस प्रकार उसने मानता मानी, मानता कर जिस दिशा से आइ थी उस ही दिशा में वापिस लौट गई।

टीकार्थ —'उवाइणित्तए' उपयाचित्तुं–मन्नत 'कयकोउयमंगल' कौतुकानि–मर्षीतिलकादि. मङ्गलानि–दही, चावल आदि. 'उल्लपडसाडिय' भीजावस्त्र पहनकर. 'पम्हल' इससे "पम्हलसुकुमालगंधकासाइयाए गायलट्ठी ओलूहइ" अर्थ मूलार्थवत्. 'एवं वयति' इस प्रकार बोली–सातवें अध्ययन का विवरण पूर्ण हुवा.

मूल —तते णं से धन्नंतरी विज्जे ताओ नरयाओ अणंतरं उवट्टित्ता इहेव जंबुद्दीवे दीवे पाडलसंडे नगरे गंगदत्ताए भारियाए कुच्छिसी पुत्तत्ताए उववन्ने, तते णं तीसे गंगदत्ताए भारियाए तिण्हं मासाणं बहुपडि–

पुन्नाणं अयमेयारूवे दोहले पाउब्भूते—धन्नाओ णं ताओ जाव फले जाओ णं विउलं असणं पाणं खाइमं साइमं उवक्खडावेंति २ त्ता बहूहिं जाव परिवुडाओ तं विउलं असणं पाणं खाइमं साइमं सुरं च पुप्फ जाव गहाय पाडलसंडं नगरं मज्झंमज्झेणं पडिनिक्खमइ पडिनिक्खमित्ता जेणेव पुक्खरिणी तेणेव उवागच्छति तेणेव उवागच्छित्ता पुक्खरिणीं ओगाहिंति ण्हाता जाव पायच्छित्ताओ तं विउलं असणं पाणं खाइमं साइमं बहूहिं मितणाइ जाव सद्धिं आसादेंति दोहलं विणयेंति एवं संपेहेइ संपेहित्ता.

अर्थ—तब वह धन्वन्तरी वैद्य का जीव उस नरक से अन्तर रहित निकलकर इस ही जम्बुद्वीप नामक द्वीप के अन्दर पाडलसण्ड नगर में गंगदत्ता भार्या के गर्भ में उत्पन्न हुवा, बाद उस गंगदत्ता भार्या को तीन मास-पूर्ण होने पर इस प्रकार का दोहला उत्पन्न हुवा—वे माताएँ धन्य हैं यावत् (जन्म-जीवन) सफल है कि जो बहुत सा अशन-पान-खादिम-स्वादिम तैयार करावें, तैयार करा कर बहुतसी स्त्रियों के साथ मिल कर वह विपुल असन पान-खादिम-स्वादिम, मदिरा तथा पुष्प वगैरा को यावत् ग्रहण कर पाडलखण्ड नगर के बीचोबीच होकर बाहर-निकली, निकल कर जहां पुष्करिणी नाम की बाव है वहां आती है, आकर पुष्करिणी में प्रवेश करें, उस में स्नान करके यावत् प्रायश्चित कर उस असन-पान-खादिम-स्वादिम बहुतसी मित्रादि की स्त्रियों के साथ यावत् आस्वादन

सार्थवाहिनी को सर्व अलंकारों से शोभित की, पश्चात् वह गंगदत्ता भार्या उन मित्रादि की और अन्य गांव की बहुत स्त्रियो के साथ उन विपुल असन–पान–खादिम–स्वादिम और मदिरा का आस्वादन करती हुई अपना दोहला पूर्ण किया, पूर्ण करके जिस दिशामें से आई थी उस ही दिशामें वापिस लौट गई।

टीकार्थ— ×× ×× ×× ×× ××

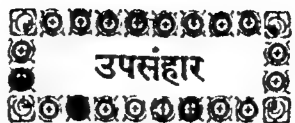
पुत्र का जन्म–माता पिता का विरह
कष्टमय भिखारी दशा

मूल—सा गंगदत्ता सत्थवाही पसत्थदोहला तं गब्भं सुहंसुहेणं परिवहति, तते णं सा गंगदत्ता भारिया णहवणं मासाणं बहुपाडिपुन्नाणं जाव पयाया, ठिइवडियं जाव जम्हाणं इमे दारए उम्बरदत्तस्स जक्खस्स उववातियलद्धते तं होऊणं दारए उंबरदत्ते नामेणं, तते णं से उंबरदत्ते दारए पंचधातिपरिग्गहिए परिड्ढइ, तते णं से सागरदत्ते सत्थवाहे जहा विजयमित्ते जाव कालमासे कालं किच्चा, गंगदत्तावि, उंबरदत्ते

निच्छूढे जाव उज्झियते, तते णं तस्स उम्बरदत्तस्स दारयस्स अन्नया कयावि सरीरगंसि जमगसमगमेव सोलस रोगायंका पाउब्भूया; तंजहा—सासे खासे जाव कोढे, तते णं से उंबरदत्ते दारए सोलसहिं रोगायंकेहिं अभिभूए समाणे सडियहत्थं जाव विहरति, एवं खलु गोयमा! उंबरदत्ते पुरापोराणाणं जाव पच्चणुब्भवमाणे विहरति।

अर्थ — अच्छे दोहलेवाली वह गंगदत्ता सार्थवाहिनी अपने गर्भ को सुखे सुखे पालन करती है, तब उस गंगदत्ता भार्या ने नौ मास परिपूर्ण होने पर यावत् पुत्र को जन्म दिया ❀ उस की स्थितिपतिका (जन्मोत्सव) करके यावत् यह हमारा पुत्र उम्बरदत्त यक्ष की मानता मानने से प्राप्त हुवा है इस लिय इस पुत्र का नाम 'उम्बर दत्त' हो, बाद उम्बरदत्त लड़का पाँच धाय माताओं से पालन-पोषण होता हुवा बड़ा हुआ; पश्चात् वह सागरदत्त सार्थवाह विजयमित्र की तरह यावत् काल समय काल किया, गंगदत्ता ने भी काल किया, उज्झितक के माफिक उम्बरदत्त घर से निकाल दिया गया, बाद उस उम्बरदत्त लड़के को किसी एक वक्त शरीर में एक साथ सोलह

❀ यह एक सहज प्रश्न होता है कि— जैन सिद्धान्तानुसार और आत्म-अनुभव से यह ज्ञात होता है कि देव आदि कोई भी पुत्र नहीं दे सकते कर्मानुसार ही पुत्र संयोग होता है, तो फिर उम्बरदत्त यक्षदेव की मानता से पुत्र कैसे हुआ ? उत्तर में विदित हो कि पुत्र प्राप्ति तो कर्म संयोगानुसार होती है, किन्तु देव निमित्त भूत हो सकता है, अतः व्यवहार मे निमित्त को नैमित्तक का (कारण को कार्य का) रूप दिया जाता है, इसलिये यह प्रसङ्ग वाधक नहीं है।



उपसंहार

अर्थ—इस सातवें अध्ययन में उम्बरदत्त भिखारी का करुणापूर्ण चित्र हृदय को हिला देता है, धनवन्तरी वैद्य के भव में पापोपदेश का असह्य परिणाम जगज्जन को जागृत करता है, आखीर मोक्ष को प्राप्त करने का खुलासा हर्षोत्पन्न करता है— मुमुक्षों ! आप इस उम्बरदत्त के पूर्व-वर्त्तमान और भावि भवों पर पर्यालोचन कर अपना हित साधनक पूर्ण लक्ष रखियेगा ।

दुःख विपाक का सातवाँ अध्ययन मूल—अर्थ और टीकार्थ सहित सम्पूर्ण हुवा.

❋ आठवाँ अध्ययन ❋

(शौर्यदत्त)



मूल—जइ णं भंते! अट्ठमस्स उक्खेवो-एवं खलु जम्बु ! तेणं कालेणं तेणं समएणं सोरियपुरं णगरं, सोरियवंडेसगं उज्जाणं, सोरियो जक्खो, सोरियदत्तो राया तस्सणं सोरियपुरस्स णगरस्स बहिया उत्तर पुरच्छिमे दिसीभागे एत्थ णं एगे मच्छंदवाडए होत्था, तत्थ णं समुद्ददत्ते नामं मच्छंधे परिवसति अहम्मिए जाव दुप्पडियाणंदे, तस्स णं समुद्ददत्तस्स समुद्ददत्ता नामं भारिया होत्था अहीण० पंचेंदियसरीरा, तस्स णं समुद्ददत्तस्स पुत्ते समुद्ददत्ता भारियाए अत्तए सोरियेदत्ते नामं दारए होत्था, अहीण पडिपुण्णपंचिंदियसरीरे.

अर्थ—जम्बुस्वामी अपने गुरुदेव स्वधर्म स्वामी को पूछते हैं-हे भगवन्! जो सातवें अध्ययन का इस प्रकार (ऊपर आपने फरमाया) भगवन्त महावीर देवने अर्थ फरमाया है तो हे पूज्य! अब आप आठवें अध्ययन का उत्क्षेप

टीकार्थ—   ××   ××   ××   ××   ××

रोगग्रस्त की पृच्छा—भगवन्त का प्रत्युत्तर
रसोइये का निर्दय कृत्य

मूल—इमे अज्झत्थिए समुपन्ने, पुरापोराणाणं जाव विहरति, एवं संपेहाति संपेहित्ता जेणेव समणे भगवं, जाव पुव्वभव पुच्छा, जाव वागरणं एवं खलु गोयमा ! तेणं कालेणं तेणं समएणं इहेव जम्बूदीवे दीवे भारहे वासे नंदिपुरे नामं णगरे होत्था, मित्तेराया तस्स णं मितस्स रन्नो सिरीए नामं महाणासिए होत्था अहम्मिए जाव दुप्पाडियाणंदे, तस्स णं सिरीयस्स महाणासियस्स बहवे मच्छिया य वागुरिया य साउणिया य दिन्नभत्ति-भत्तवेयणा कल्लाकल्लं बहवे सण्हमच्छा य जाव पडागातिपडागे य अए य जाव महिसे य तितिरे य जाव मयूरे य जीवियाओ ववरोवेंति सिरीयस्स महाणासियस्स उवणेंति—

अर्थ—गौतम स्वामी को इस प्रकार का विचार उत्पन्न हुवा- यह पुरुष पूर्वसंचित कर्मों को यावत् भोगता हुआ रहता है, इस कदर विचार किया, विचार करके जहां श्रमण भगवन्त महावीर विराजते हैं वहां पर गौतम गणधर आये, यावत् प्रभु से उस पुरुष का पूर्वभव पूछा, यावत् भगवन्त ने इस प्रकार उत्तर फरमाया- निश्चय करके इस प्रकार हे गौतम! उस काल उस समय में इसही जम्बुद्वीप नामक द्वीप में भरत क्षेत्रांतरगत नन्दिपुर नामक नगर था; मित्र नामका राजा था, उस मित्र राजा के श्रीयक नामक रसोइया था, वह अधर्मी यावत् दूसरों को दुःख देकर आनन्द मनाने वाला था, उस श्रीयक रसोइये के बहुत से मच्छीमार-पशुमार-पक्षीमार नोकर थे उनको पैसे वगैरा अथवा घी-अनाज वगैरा देता था, इससे वे हमेशां छोटे २ मच्छ यावत् पताकातिपताक जाति के मत्स्य, बकरे यावत् भेंसे, तीतर यावत् मोर इत्यादि जीवों को मारकर श्रीयक रसोइये को सोंपते थे.

टीकार्थ—'सण्हमच्छा' छोटे २ मत्स्य; इससे यहां पर यावत् करण से "खवल्लमच्छा विज्झिडिमच्छा हलिमच्छा" इत्यादि "लंभणमच्छा पडाया" अर्थात खवल्लादि जाति के मच्छ, पडाग जाति के मच्छ, यह अन्त में जानना. यह सब मच्छों के रूढिगम्य भेद है. 'अएय' बकरे यावत् शब्द से "एलए य रोज्झे य सूयरे य मिगे य" अर्थात् मेड़-रोझ-सुअर और हिरण. 'तित्तरे य' तीतर यावत् शब्द से "वट्टए य लावए य कुक्कुडे य" यानी वर्त्तक- लावक और कुकड़े समझना.

मूल—अन्ने य से वहवे तित्तरा य जाव मयूरा य पंजरंसि संनिरुद्धा चिट्टंति, अन्ने य वहवे पुरिसे दि-

अर्थ—खुद वह श्रीयक रसोइया भी बहुत से यावत् जलचर के मांस-स्थलचर के मांस-खचर के मांस और सब तरह के मांस रस तथा हरे शाक सेके हुवे, तले हुवे, भुंजे हुवे को मदिरा के साथ आस्वादन करता हुवा रहता था, पश्चात् वह श्रीयक रसोइया ऐसे कार्य करता हुवा बहुतर पाप कर्मों का उपार्जन कर तेतीस सौ (३३००) वर्ष की उत्कृष्ट आयुष्य पालकर काल समय में काल करके छट्टी नरक (मघा नरक) में उत्पन्न हुवा.

टीकार्थ—'जलयरमंसेहिं' से लेकर 'भज्जिएहिं' तक सब शब्दों के अर्थ मूलार्थ के माफिक समझना.

शौर्यदत्त का जन्म – मातापिता का मरण अधीश पद प्राप्ति

मूल—तते णं सा समुद्दत्ता भारिया निन्दू यावि होत्था, जाया जाया दारगा विणिहायमावज्जंति जह गंगदत्ताए चिंता आपुच्छणा उवातियं दोहला जाव दारगं पयाता, जाव जम्हाणं अम्हं इमे दारए सोरियस्स जक्खस्स उवाइयलद्धे तम्हाणं होउ अम्हं दारए सोरियदत्ते नामेणं, तए णं से सोरियदत्ते दारए

पंचधाइं जाव उम्मुक्कबालभावे विण्णयपरिणयमित्ते जोव्वणगमणुपत्ते होत्था, तते णं से समुद्ददत्ते अन्नया कयाइं कालधम्मुणा संजुत्ते, तते णं से सोरियदत्ते बहूहिं मित्तणाइ सद्धिं रोयमाणे समुद्ददत्तस्स णीहरणं करेंति २ त्ता लोइयमयाइं किच्चाइं करेंति, २ त्ता अन्नया कयाइं सयमेव मच्छंदमहत्तरगतं उवसंपज्जित्ताणं विहरति ।

अर्थ—तदनन्तर वह समुद्रदत्ता भार्या मृतवत्सा थी, बालक उत्पन्न हो होकर मरण-शरण होजाते थे, किसी एक दिन उसे गंगदत्ता के माफिक विचार उत्पन्न हुआ (वे मातयें धन्य हैं, कृतार्थ हैं इत्यादि सातवें अध्ययन की तरह) भर्त्तार को पूछना, यक्ष की मानता लेनी, दोहला उत्पन्न होना और पुत्रका जन्म होना; सर्व गंगदत्ता के माफिक, यावत् इसलिये हमारा यह लड़का शौर्ययक्ष की मानता से प्राप्त हुआ है उससे हमारे इस पुत्र का नाम 'शौर्यदत्त' हो बाद वह शौर्यदत्त पुत्र पांच धायमाताओं से पालन-पोषण होता हुआ बाल्यावस्था से मुक्त हुआ परिणाममात्र से कलाको प्राप्त हुआ और युवा अवस्था में प्रवेश किया, पश्चात् वह समुद्रदत्त किसी एक दिन मृत्यु के आधीन हुआ, तब शौर्यदत्त ने बहुत से मित्रादिकों के साथ रोते हुए समुद्रदत्त की सीढी निकाली, निकालकर लौकिक मरणकार्य किये, करके किसी एक दिन स्वयं मत्स्यबंध (मच्छीमार) के अधिपति पदको प्राप्त कर विचरने लगा–रहने लगा ।

को पकड़ते थे, पकड़कर एक काष्टवाहण में उनको भरकर किनारे पर लाकर मत्स्यों के ढेर लगाते थे लगाकर उन को धूप में सुखाते थे.

टीकार्थः— 'एगाट्टियाहिं' नौभिः-नावोंद्वारा 'दहगलणेहि' इत्यादि 'एगाट्टियं भरेंति' यह अन्त रूढिगम्य है; तथापि-हृदगलनं से लेकर गलानि पर्यन्त—सब का अर्थ मूलार्थ के अनुसार जानना. 'वक्कबंधेहिय' वल्कबंधनैः—इत्यादि का अर्थ मूलार्थवत्. 'मच्छखलए करेंति' मत्स्यपुञ्जान् कुर्वन्ति—मच्छों के ढेर लगाते थे.

मूल— अन्ने य से वहवे पुरिसा दिन्नभइभत्तवेयणा आयवतत्तएहिं सोलेहि य तलेहि य भज्जेहि य रायमग्गंसि वितिकप्पेमाणा विहरंति, अप्पणा वि य णं से सोरियदत्ते बहूहिं सण्हमच्छेहि य जाव पडागाइपडागेहि सोल्लेहि य भज्जेहि य सुरं च आसाएमाणे विहरति।

अर्थ—अन्य बहुतसे पुरुष भक्त और वेतन रूप रोजगार लेने वाले धूप में सूखे हुवे मत्स्यों को पका कर तल कर, शेक कर, राज मार्ग पर लेजा कर उन का व्यापार करते हुवे रहते थे; और खुद शौर्यदत्त भी बहुतसे छोटे मत्स्यों को यावत् (उपरोक्त कथित मत्स्य प्रकार) पताकातिपताका नामक मत्स्यों को रांधे हुवे, भुंजे हुवे, तले हुवों को मदिरा के साथ आस्वादन करता हुवा रहता था.

टीकार्थ— ×× ×× ×× ×× ××

मच्छीमार की हिंसा का दारुण फल

मूल—— तते णं तस्स सोरियदत्तस्स मच्छंधस्स अन्नया कयाइं ते मच्छे सोल्ले तले भज्जे आहारेमाणस्स मच्छ कंटए गलए लग्गे यावि होत्था, तए णं से सोरियमच्छंधे महयाए वेयणाए अभिभूते समाणे कोडुंबिय पुरिसे सद्दावेति २ त्ता एवं वयासी – गच्छह णं तुम्हे देवाणुप्पिया ! सोरियपुरे नयरे संघाडक जाव पहेसु य महया महया सद्देणं उग्घोसेमाणा उग्घोसेमाणा एवं वयह – एवं खलु देवाणुप्पिया ! सोरियस्स मच्छंधस्स मच्छकंटए गले लग्गे तं जो णं इच्छाति विज्जो वा ६ (विज्जपुत्तो वा—जाणुओ वा—जाणुयपुत्तो वा—तेगिच्छि वा—तेगिच्छिपुत्तो वा) सोरियमच्छियस्स मच्छकंटयं गलाओ निहारित्तते तस्स णं सोरियमच्छिए विउलं अत्थसंपया णं दलयति ।

बड़ा निवाला ठाँसना, अथवा मुख मर्दन करने को डाढ के नीचे लकड़ी का टुकड़ा दाबना इससे. 'शल्योद्धरण और विशल्यकरण' का अर्थ मूलार्थ समान. 'निहरित्तए' निष्काशयितुं - निकालने के लिये. 'विसोहित्तए' पूयाद्यपनेतुं - परु आदि दूर करने के वास्ते — अष्टमाध्ययनस्य विवरणं समाप्तम्.

अन्तिम निर्णय

मूल — तते णं से सोरियमच्छंधे विज्जपडियारनिव्विणे ते णं दुक्खेणं महया अभिभूते सुक्के जाव विहरति, एवं खलु गोयमा! सोरियदत्ते पुरापोराणाणं जाव विहरति - सोरिए णं भंते! मच्छंधे इयो य काल मासे कालं किच्चा कहिं गच्छिहिति ? कहिं उववज्जिहिति ? गोयमा ! सत्तरिवासाइं परमाउयं पालइत्ता कालमासे कालं किच्चा इमिसे रयणप्पभाए पुढवीए, संसारो तहेव पुढवीओ, हत्थिणाउरे णगरे मच्छत्ताए उववन्ने, से णं ततो मच्छिएहिं जीवियाओ ववरोविए तत्थेव सेट्ठिकुलंसि बोहिं सोहम्मे कप्पे महाविदेहे

वासे सिज्झिहिति० एवं खलु जम्बू! निक्खेवो-(२९) अट्ठमं अज्झयणं सम्मत्तं ॥८॥

अर्थ—तदन्तर वह शौर्यदत्त मच्छीमार वैद्यादिकों की चिकित्सा से खेद पाता हुवा उस दुःख से भारी परास्त होकर शरीर से सूखा हुवा रहता है, इस तरह निश्चय हे गौतम! शौर्यदत्त पूर्वकृत पुराने कर्मफल भोगता हुवा यावत् रहता है-गौतम स्वामी पूछते हैं-हे भगवन्त! शौर्यदत्त मच्छीमार यहां से कालसमय काल करके कहां जायगा? कहां उत्पन्न होगा? भगवन्त फरमाते हैं-हे गौतम! वह शौर्य मच्छीमार सत्तर वर्ष की पूर्ण आयु पाल कर इस ही रत्नप्रभा पृथ्वी में (पहिली नरक में) उत्पन्न होगा. इसका संसार भ्रमण पहिले अध्ययन के अनुसार कहना, नरकादि में से निकल कर हस्तिनापुर नगर में मच्छपने उत्पन्न होगा, वहां मच्छीमार से मारे जाने पर उस ही नगर में सेठ के कुल में उत्पन्न होगा; वहां पर युवा अवस्था में सम्यक्त्व प्राप्त कर चारित्र ग्रहण कर सौधर्म देवलोक में देवपने उत्पन्न होगा, वहां से च्यवकर महाविदेह क्षेत्र में उत्तम कुल में उत्पन्न होगा, वहां संयम धारण कर भली भांति पालन कर केवलज्ञान प्राप्त करेगा, पश्चात् समय पर अनन्त सुखधाम मोक्षपद प्राप्त करेगा-इस कदर निश्चय हे जम्बो! भगवन्त महावीर देव ने इस प्रकार निक्षेप किया यानी इस अध्ययन का अर्थ प्रकाशित किया-आठवें अध्ययन का अर्थ सम्पूर्ण हुवा.

उक्किट्ठा उक्किट्ठसरीरा ।

अर्थ—जम्बूस्वामी स्वधर्म गणधर महाराज को पूछते हैं– हे पूज्यवर्य ! जो आठवें अध्ययन का अर्थ परमात्मा महावीर देव ने इस प्रकार (जैसा आपने फरमाया) प्रकाशित किया है तो हे भदंत ! अब नौवें अध्ययन का उत्क्षेप (प्रस्तावना–बयान) करने की कृपा करें? गणधर भगवान् फरमाते हैं–निश्चय इस प्रकार हे जम्बो ! उस काल उस समय में रोहीड़ नामका नगर था, वह ऋद्धिशाली–निर्भय और समृद्धिवाला था, इस नगर के इशान कोण में – पृथ्वीअवतंसक संज्ञक उद्यान था, उस में धरण नामका यक्ष (यक्षायतन) था, वैश्रमणदत्त राजा राज्य करता था, श्रीदेवी नाम की पटरानी थी और पुष्पनन्दी नामका कुमार था, वह युवराज पद को प्राप्त हुवा था; उस रोहिड़ नगर में दत्त नामक एक गाथापति रहता था, वह लक्ष्मीवन्त था, उस के कृष्णश्री नामकी भार्या थी, उस दत्त की पुत्री और कृष्णश्री की अङ्गजा 'देवदत्ता' नाम की लड़की थी, अहीण पारिपूर्ण पंचेन्द्रीय शरीर वाली थी, यहां तक की अतिउत्कृष्ट (सुन्दर) शरीरवाली थी।

टीकार्थ— ×× ×× ×× ×× ××

एक करुणदशा वाली स्त्री को देखकर गौतम गणधर की पृच्छा

मूल — तेणं कालेणं तेणं समएणं सामी समोसढे जाव परिसा निग्गया, तेणं कालेणं तेणं समएणं जेट्ठे अंतेवासी छट्ठक्खमण तहेव जाव रायमग्गं ओगाढे हत्थी आसे पुरिसे पासति, तेसिं पुरिसाणं मज्झगयं पासति एगं इत्थियं अवउडगबंधणं उक्खित्तकन्ननासं जाव सूले भिज्जमाणं पासति, इमे अब्भत्तिए तहेव निग्गए जाव एवं वयासी – एसा णं भंते! इत्थिया पुव्वभवे का आसी ?.

अर्थ — उस काल उस समय में भगवन्त समवसरे, यावत् पर्षदा (देशना सुनकर) वापिस गई, उस काल उस समय में परमात्मा के बड़े शिष्य ने (गौतम स्वामी ने) छट तप के पारणे राज मार्ग में प्रवेश किया, वहां पर बहुत से हाथी – घोड़े और पुरुष देखे, उन पुरुषों के मध्य में रही हुई एक स्त्री को उल्टी मुस्कियाँ बाँधी हुई – कान – नाक छेदे हुवे यावत् शूली पर चढाने को लेजाती हुई देखी, गौतम स्वामी को पूर्ववत् विचार उत्पन्न हुवा,

दिये, वे महल अत्यन्त ऊँचे थे (विशेषार्थ टीकार्थ में) तब उस सिंहसेन कुमार को किसी एक वख्त श्यामा प्रमुख पॉच सौ श्रेष्ठ राजकन्या के साथ एक ही दिन पाणिग्रहण कराया यानी विवाह किया, तथा पाँच सौ २ वस्तुओं का मात-पिता ने प्रीति दान दिया, (खुलासा टीकार्थ में) तत्पश्चात् वह सिंहसेन कुमार श्यामा वगैरा पॉच सौ भार्याओं के साथ महल के ऊपर यावत् विचरने लगा यानी क्रीड़ा करने लगा; बाद में किसी एक दिन उस महासेन राजा के मरण-शरण होजाने पर (पूर्ववत्) श्मसान यात्रा निकाली, फिर समय पर सिंहसेन कुमार राजा हुवा, वह बडा (हिमवंत-महालय-मंदराचल-महेन्द्र जैसा बड़ा) सार भूत हुवा।

टीकार्थः— 'अब्भुग्गय' इस से "अब्भुग्गयमूसिय पहसिए चेव" अर्थात् अत्यन्त ऊँचे और प्रहसन प्रारम्भ किया हो ऐसे, विशेष में – "मणिकणगरयणचित्ते — एगं चणं महं भवणं करिंति अणेगखंभसयसन्निविट्ठं" अर्थात् मणि – सुवर्ण और रत्नों से विचित्र-उन में एक बड़ा महल बनवाया जो सैंकड़ो थंभों से व्याप्त था; इत्यादि भवनवर्णक सूत्र जानना. 'पंचसयओ दाओ' पॉच सो दिये, इससे "हिरण्यकोटि प्रभृतिनां प्रेपणकारिकान्तानं पदार्थानां पञ्चपञ्चशतानि" अर्थात् घड़ा हुवा क्रोड़ और विना घड़ा क्रोड़ सोने (क्रोड़ मूल्य का सोना) से लेकर दासी पर्यन्त पॉच सौ २ वस्तुएँ मात-पिता ने कुमार को दीं; और कुमारने प्रत्येक स्त्री को एक २ वस्तु वक्षीस की. 'महया' इस से "महयाहिमवन्तमहन्तमलयमंदरमहिंदसारे" अर्थ मूलार्थ के माफिक; इत्यादि राजा का वर्णन कहना।

सिंहसेन राजा का अनीतिपूर्ण वर्तन
सासुओं का प्रपंची विचार

मूल—तए णं से सीहसेणे राया सामाए देवीए मुच्छित्ते ४ (गिद्धे-गढिए-अज्झोववन्ने) अवसेसाओ देवीओ नो आढाति नो परिजाणाति अणाढाइज्जमाणे अपरिजाणमाणे विहरति, तते णं तासिं एगूणगाणं पंचण्हं देवीसयाणं एगूणाइं पंचमाधाइसयाइं इमिसे कहाए लद्धट्ठाइं समाणाइं एवं खलु ! सीहसेणे राया सामाए देवीए मुच्छिए ४ अम्हं धूयाओ नो आढायंति नो परिजाणंति अणाढाइज्जमाणे अपरिजाणमाणे विहरति, तं सेयं खलु अम्हं सामं देवीं अग्गिपओगेण वा विसप्पओगेण वा सत्थप्पओगेण वा जीवियातो ववरोवित्तए, एवं संपेहेंति २ त्ता सामाए देवीए अंतराणि य छिद्दाणि य विवराणि य पडिजागरमाणीओ पडिजागरमाणीओ विहरंति ।

इस से रानी को कोइ उपाय से मारना वगैरा) अवसरादि देखती हुई रहती हैं; अतः मुझे पता नहीं कि किस भयंकर मौत से मारेगी ? ऐसा विचार कर भयभीत होकर जहाँ कोपगृह (रीसाकर रहने का स्थान) है वहाँ पर आती है , आकर हतोमन वाली होकर यावत् विचारने लगी.

टीकार्थ—'भीया जेणेव ' भीता यत्र—डरी जहाँ पर. "ओहय जाव ' यहाँ पर यावत् करण से ऐसा जानना—"ओहयमणसंकप्पा भूमिगयदिट्ठिया " " करतलपल्हत्थमुही अट्टज्झाणोवगय " अर्थात् मन का विचार नाश हुवा इस से दिग्मूढ बनी भूमि पर दृष्टि रक्खी, और हथेली पर मुख लगा रक्खा, ऐसी स्थिती में रहकर यानी उदास होकर आर्त्तध्यान (दुःख विचार) करने लगी.

मूल—तते णं से सीहसेणे राया इमिसे कहाए लद्धट्ठे समाणे जेणेव कोवघरए जेणेव सामादेवी तेणेव उवागच्छति २ त्ता सामं देवीं ओहयमणसंकप्पा जाव पासति २ त्ता एवं वयासी—किन्नं देवाणुप्पिया ! जाव ओहयमणसंकप्पा झियासि ? तते णं सा सामादेवी सीहसेणेण रण्णा एवं वुत्ता समाणा उप्फेणओफेणीयं सीहसेणं रायं एवं वयासी एवं खलु सामी ! मम एगूणपंचसवत्तीसयाणं एगूणपंच [धाइ] माइसयाणं इमिसे कहाए लद्धट्ठाइं समाणाइं अन्नमन्नं सद्दावेंति सद्दावेत्ता एवं वयासी—एवं खलु सीहसेणे राया सामाए देवीए

उवरि मुच्छिए अम्हा णं धुआ णो आढाति जाव अंतराणि अ छिद्दाणि अ विवराणि य पडिजागरमाणीओ विहरंति, तं न नज्जति भीया जाव झियामि ।

अर्थ—पश्चात् वह सिंहसेन नृप इस वृतान्त को जानने पर जहां पर कोप गृह है जहां पर श्यामा देवी है वहाँ पर आता है, आकर श्यामा देवी को हतोमन संकल्प वाली यावत् देखी, देख कर इस प्रकार बोला – अहो देववल्लभे ! क्यों तूँ हतोमनवाली होकर यावत् आर्त्तध्यान ध्याती हो ? तब वह श्यामा देवी सिंहसेन के इस प्रकार पूछने पर क्रोध से तप्तवचनों द्वारा सिंहसेन राजा को इस कदर अर्ज की – निश्चय इस तरह हे स्वामिन् ! मेरी एक कम पाँच सौ (४९९) सपत्नियों की (शोकों की) एक कम पाँच सौ (४९९) धाई माताएँ इस वृतान्त को (मेरे में आपकी आसक्ती को) जान कर परस्पर एक दूसरी को पुकारती थीं, पुकार कर परस्पर इस कदर विचार करती थीं – निश्चय इस प्रकार सिंहसेन राजा श्यामा देवी पर मुग्ध हुवा है, इस से हमारी लडकियों का आदर नहीं करता है, यावत् अन्तर-छिद्र और विवर देखती हुई जागृत होकर रहती हैं; मुझे पता नहीं कि (किस कुमौत) मुझे मारेंगी, अतः मैं भय भीत होकर यावत् विचार करती हूँ ।

टीकार्थ — ‘ उप्फेणउप्फेणीयं ’ सकोपोष्मवचनं यथा भवति – कोप सहित उष्ण वचन जैसा होता है वैसा इसके अनन्तर वाक्य का एक २ अक्षर पुस्तकों में मिलता है वह इस प्रकार जानना – ‘ एवं खलु सामी ’ से लेकर ‘ भूमीगयदिट्ठीया ’ तक

तेणेव उवागच्छंति २ त्ता तमाणत्तियं पच्चप्पिणति, तते णं से सीहसेणेराया अन्नया कयाति एगूणगाणं पंचण्हं देवीसयाणं एगूणाइं पंचमाइसयाइं आमंतेति, तते णं तासिं एगूणापंचदेवीसयाणं एगूणपंचमाइसयाइं सीहसेणे णं रन्ना आमंतियाइं समाणाति सव्वालंकारविभुसियाइं जहा विभवेणं जेणेव सुपइट्ठे णगरे जेणेव सीहसेणेराया तेणेव उवागच्छंति ।

अर्थः— तब उन कौटुम्बिक पुरुषों ने हाथ जोड़कर यावत् श्रवण किया, श्रवण करके सुप्रतिष्ट नगर के बाहर पश्चिम दिशा के विभाग मे एक बड़ी कुटाकार शाला यावत् बनाई, सैकड़ों स्तम्भ से शोभित दर्शनीय ४ इत्यादि तैयार कराई, बाद जहां सिंहसेन राजा था वहां आते हैं, आकर उन की उस आज्ञा को वापिस नज़र करते हैं; तदन्तर उस सिंहसेन राजा ने किसी एक वक्त एक कम पॉच सौ (४९९) रानियों को एक कम पाँच सौ उनकी माताओं को, आमंत्रण किया, तब चार सौ नवानवे रानियॉ और चार सौ नवानवे उनकी माताएँ सिंहसेन राजा की निमंत्रणा होने पर सर्व आभूषणों से भूपित होकर अपने २ वैभव सहित जहां सुप्रतिष्ट नगर है, जहां सिंहसेन राजा है वहां आती है.

टीकार्थ— ×× ×× ×× ×× ××

राजा ने बनावटी सत्कार किया

मूल—तते णं से सीहसेणे राया एगूणपंचदेवीसयाणं एगूणपंचमाइसयाणं कूडागारसालं आवासे दलयाति, तते णं से सीहसेणे राया कोडुंबियपुरीसे सद्दावेति २ त्ता एवं वयासी—गच्छह णं तुम्हे देवाणुप्पिया ! विउलं असणं पाणं खाइमं साइमं उवणेह, सुबहुं पुप्फवत्थगंधमल्लालंकारं च कूडागारसालं साहरह य, तते णं ते कोडुंबियपुरिसा तहेव जाव साहरेंति, तते णं तासिं एगूणगाणं पंचण्हं देवीसयाणं एगूणपंचमाइसयाइं सव्वालंकारविभूसियाइं करेंति २ त्ता तं विउलं असणं ४ सुरं च आसाएमाणाइं ४ [विसाएमाणाइं—परिभाए माणाइं—परिभुंजमाणाइं] गंधव्वेहि य नाडएहि य उवगीयमाणाइं विहरंति।

अर्थ—तत्पश्चात् उस सिंहसेन राजा ने चार सौ नवानवे रानियों को और चार सौ नवानवे उनकी

मूल—तते णं से सीहसेणे राया एयकम्मे ४ [एयप्पहाणे – एयविज्जे – एयसमुद्दाचारे] सुबहुं पावकम्मं समज्जिणित्ता चोत्तीसं वाससयाइं परमाउयं पालइत्ता कालमासे कालं किच्चा छट्ठीय पुढवीए उक्कोसेणं वावीससागरोवमाइं ठिइएसु उववन्ने, से णं तओ अणंतरं उव्वट्टित्ता इहेव रोहडए णगरे दत्तस्स सत्थवाहस्स कन्नसिरिए भारियाए कुच्छिंसि दारियत्ताए उववन्ने, तते णं सा कन्नसिरि नवण्हं मासाणं जाव दारियं पयाया, सुकुमालपाणिपायं (जाव) सुरूवं, तते णं तिसे दारियाए अम्मापियारो निव्वित्तवारसाहियाए विउलं असणं ४ जाव मित्तणाति. णाम धेज्जं करेंति तं होउ णं दारिया देवदत्ता णामेणं।

अर्थ—तदनन्तर वह सिंहसेन राजा ऐसे पाप कर्म करने वाला (ऐसे कर्म मे प्रधान-ऐसी विद्यावाला-ऐसे आचार वाला) अत्यन्त पापकर्म को उपार्जन करके चौतीस सौ (३४००) वर्ष की उत्कृष्ट आयुष्य पालकर काल समय काल करके छट्टी नरक में वावीस सागरोपम की उत्कृष्ट स्थिति मे उत्पन्न हुवा; वह वहां से अन्तर रहित निकल कर इसही रोहिड़ नगर में दत्त सार्थवाह की कृष्णश्री भार्या के उदर में पुत्रीपने उत्पन्न हुवा, तब उस कृष्णश्री ने नौ मास पूर्ण होने पर यावत् लड़की को जन्म दिया, पश्चात् उस लड़की के माता – पिता ने वारह दिन व्यतीत होने पर वहुतसा असनादि तैयार कराया यावत् मित्र-ज्ञाति आदि को जीमा कर इस तरह नाम

की स्थापना करी – हमारी लड़की का नाम 'देवदत्ता' हो.

टीकार्थ— ×× ×× ×× ×× ××

देवदत्ता की मांगनी आडम्बरपूर्ण विवाह

मूल—तए णं सा देवदत्ता पंचधातीपरिगाहिया जाव परिवड्ढति, तते णं सा देवदत्ता दारिया उमुक्कबालभावा जोव्वणेण रूवेण लावण्णेण य जाव अतीव उक्किट्ठसरीरा जाया यावि होत्था, तते णं सा देवदत्ता दारिया अन्नया कयाइं ण्हाया जाव विभूसिया बहूहिं खुज्जाहिं जाव परिक्खित्ता उप्पिं आगासतलगंसि कणगतिंदूसेणं कीलमाणी विहरइ, इमं च णं वेसमणदत्ते ण्हाया जाव विभूसिए आसं दुरूहित्ता बहूहिं पुरिसेहिं सद्धिं सपरिवुडे आसवाहिणीयाए णिज्जायमाणे दत्तस्स गाहावइस्स गिहस्स अदूरसामंतेणं विइवयति।

अभ्यन्तर सभा के पुरुषों को बुलाकर इस प्रकार फरमान करते हैं— अहो देवों के प्यारे ! तुम जाओ दत्त सार्थवाह की पुत्री और कृष्णश्री भार्या की आत्मजा देवदत्ता लड़की की पुष्पनन्दी युवराज की पत्नितरीके मांग करो ? यदि वह खुद राज्य के शुल्कवाली हो यानी उस के एवज में राज्य मांगे तो देना कबूल करना *.

टीकार्थ—' जइवि (य) सा सयं रज्जसुक्का ' यद्यपि वह स्वयं राज्यशुक्ला हो; यानी स्वयं राज्य प्राप्त करने की इच्छा करे.

मूल—तते णं ते अब्भिंतरट्ठाणिज्जा पुरिसा वेसमणेणं रन्ना एवं वुत्ता समाणा हट्ठतुट्ठा करयल जाव पडिसुणेंति, पडिसुणित्ता ण्हाया जाव सुद्धप्पावेसाइं संपरिवुडा जेणेव दत्तस्स गिहे तेणेव उवागच्छंति, तते णं से दत्ते सत्थवाहे ते पुरिसे एज्जमाणे पासति ते पुरिसे एज्जमाणे पासित्ता हट्ठतुट्ठ० आसणाओ अब्भूट्ठेइ आसणाओ अब्भूट्ठित्ता सत्तट्ठपयाइं पच्चुगाते आसणे णं उवनिमंतेति २ त्ता ते पुरिसे आसत्थे वीसत्थे सुहासणवरगए एवं वयासी—संदिसंतु णं देवाणुप्पिया ! किं आगमणप्पओयणं ? तते णं ते रायपुरिसा

* इस का कोई ऐसा अनर्थक अर्थ न करले कि उस वक्त भी ' कन्या विक्रय ' चलता था इस का मतलब यह है कि असक्त मात-पिताओं को राजा लोग उन के निर्वाह के लिये कुछ बक्षीस करते थे

दत्तं सत्थवाहं एवं वयासी —

अर्थ—तदन्तर वे अभ्यन्तर सभा के पुरुष वैश्रमण राजा के इस प्रकार कथन करने पर हृष्ट-पुष्ट होकर दोनों हाथ जोड़ कर यावत् सुनते हैं यानी आज्ञा अङ्गीकार करते हैं, करके स्नान करते हैं यावत् शुद्ध वस्त्रादि पहनकर जहां पर दत्त सार्थवाह का घर है वहां पर आये, तब उस दत्त सार्थवाह ने उन पुरुषों को चलते हुवे यानी आते हुवे देखे, उन पुरुषों को आते हुवे देखकर हर्षित तुष्ठित होकर आसन से उठा, आसन से उठकर सात-आठ कदम सामने गया, उनको आसन पर बैठने का निमन्त्रण किया, करके वे पुरुष शान्त-प्रशान्त हुवे और सुखासन पर बैठे तब उसने उन को इस तरह पूछा—हे देवों के प्यारे ! आप आज्ञा करो (फरमाओ) आप के पधारने का प्रयोजन क्या है ? तब उन राजपुरुषों ने दत्त सार्थवाह को इस कदर कहा—

टीकार्थ— ×× ×× ×× ×× ××

मूल—अम्हे णं देवाणुप्पिया ! तव धूयं कण्हसिरीए अत्तयं देवदत्तं दारियं पूसनंदिस्स जुवरण्णो भारियात्ताते वरेमो, तं जइ णं जाणासि देवाणुप्पिया ! जुत्तं वा पत्तं वा सलाहणिज्जं वा सरिसो वा संजोगो दिज्जउ णं देवदत्ता भारिया पुसणंदिस्स जुवरण्णो, भण देवाणुप्पिया ! किं दलयामो सुक्कं ? तते णं से

अन्दर विपुल असन – पान – खादिम – स्वादिम आहार तैयार कराये, कराकर मित्र – ज्ञातिजन आदि को आमन्त्रण किया, स्नान किया यावत् प्रायश्चित (अमुक मंगल) किया, श्रेष्ठ सुखासन पर बैठा, बाद वह मित्रादि के साथ मिलकर असनादि चार आहार आस्वादनादि चार प्रकार से भोगता हुवा रहता है, जीमने के पीछे जल से चल्लु किया, सलाका से दान्त साफ कर अत्यन्त पवित्र हुवा, फिर उस ने मित्र – ज्ञाति – स्वजनादि का बहुतेरे गंध – पुष्प यावत् अलंकारों से सत्कार किया – सम्मान किया, सत्कार – सम्मान करके, देवदत्ता पुत्री को स्नान कराया, शरीर विभूषित करके एक हज़ार पुरुषों से उठाई गई पालखी में उसे बैठाई, बैठाकर बहुत से मित्र – ज्ञाति आदि यावत् (स्वजन – सम्बंधी – परिजन) को साथ लेकर सर्व ऋद्धि से यावत् बाजे बजते हुवे रोहीड़ नगर के बीचोबीच होकर जहां वैश्रमणदत्त राजा का घर है, जहां वैश्रमण राजा है वहां आया आकर दोनों हाथ जोड़ कर यावत् वधाता है, वधाकर वैश्रमणदत्त राजा को देवदत्ता नाम की अपनी लड़की अर्पण की।

टीकार्थ—' आयंते ' आचान्तः – जल से शुद्धि यानी कुल्ले करना ' चोक्खे ' चोक्षः – मुह में रहे हुवे कण वगैरा दूर करना; इस से क्या कहा गया ? ' परमसुइभूए ' अत्यन्तं शुचिभूतः— अत्यन्त पवित्र हुवे. ' ण्हायं ' स्नातं – स्नान किया. यावत् करण से ऐसा जानना:—" कयबलिकम्मं कयकोउयमंगलपायच्छित्तं सव्वालंकारे " अर्थात् गृहसंबंधी देव पूजन की, कौतुक – मंगल और प्रायश्चित किया, सर्वालंकार भूषित. ' सुबहुमित्त ' बहुत से अच्छे मित्र. यावत् शब्द से – " णियगसयणसंबंधिपरिजणेण " अर्थात् निजके–स्वजन–सम्बंधी और परिजनों से युक्त; ऐसा जानना.

मूल—ततेणं से वेसमणे राया देवदत्तं दारियं उवणियं पासति उवणियं पासित्ता हट्ठ तुट्ठ० विउलं असणं ४ उवक्खडावेति उवक्खडावित्ता मित्तनाति० आमंतेति जाव सक्कारेति २ त्ता पूसनंदीकुमारं देवदत्तं च दारियं पट्टयं दुरुहेति २ त्ता सियापीतेहिं कलसेहिं मज्जावेति २ त्ता वरनेवत्थाइं करेति करित्ता अग्गिहोमं करेति २ त्ता पूसणंदिकुमारं देवदत्ताए दारियाए पाणिं गिण्हावेति ।

अर्थ—अनन्तर उस वैश्रमण नृपेन्द्र ने देवदत्ता लड़की को प्राप्त हुई देखी, प्राप्त हुई देख कर हर्षित-आनन्दित होकर विपुल असन-पान-खादिम-स्वादिम तैयार कराये, तैयार कराकर मित्र-ज्ञातिजन आदि को आमन्त्रण किया यावत् सत्कार किया, करके पुष्पनन्दीकुमार को और देवदत्ता लड़की को बाजोट पर बैठाये, बैठा कर सपेत और पीले (चान्दी के और सोने के) कलसों से स्नान कराया, कराकर उत्तम वस्त्र वगैरा पहनाये, पहना कर अग्निहोम कराया, कराकर कुमार को देवदत्ता कुमारी के साथ हस्तमिलाप कराया, यानी विवाह कराया.

टीकार्थ— ×× ×× ×× ×× ××

पिएहिं ' रजतस्वर्णमयैः—चान्दी-सुने के बने हुवों से।

मातेश्वरी की भक्ति में तल्लीन

मूल—तए णं से पूसनंदी राया सिरिए देवीए मायभत्तिते यावि होत्था, कल्लाकल्लिं जेणेव सिरि-देवी तेणेव उवागच्छाति २ त्ता सिरिए देवीए पायवडणं करेति करित्ता सयपागसहस्सपागेहिं तेल्लेहिं अब्भिगावेति अट्टिसुहाते मंससुहाते तयासुहाते (चम्मसुहाए) रोमसुहाए चोव्विहाए संवाहणए संवाहा-वेति सुरभिणा गंधवट्टएणं उवहावेति तिहिं उदएहिं मज्जावेति तंजहा—उसिणोदएणं सिओदएणं गंधोदएणं विउलं असणं ४ भोयावेति सिरीए देवीए ण्हाताए जाव पायाच्छित्ताए जिमियभुत्तुत्तरागयाए तते णं पच्छा ण्हाति वा भुंजति वा उरालाइं माणुस्सगाइं भोगभोगाइं भुंजमाणे विहरति।

अर्थ— तदन्तर वह पुष्पनन्दी राजा श्रीदेवी के अन्दर मातृभक्ति वाला हुवा, अहर्निश जहां श्रीदेवी है वहां आता है, आकर श्रीदेवी माता के चरणों में नमस्कार करता, करके शतपाक–सहस्रपाक तैल से (सौ वस्तुवाले हज़ार वस्तुवाले तैल से) मालिस करता, हड्डियों को सुख देने वाला, मांस को सुख देने वाला, त्वचा को (चमड़ी को) सुख देने वाला और रोम को सुख देने वाला; इस तरह चार प्रकार के आरामी साधनों से आराम पहूँचाता था, बाद सुगंधी चूर्ण से शरीर को उद्वर्तन (बढाना–पुष्टकरना) करता था, फिर तीन प्रकार के जल से स्नान कराता था, वे जल ये हैं—१ गरम जल २ ठंडा जल ३ सुगंधी जल; पीछे असनादि चार प्रकार के आहार से भोजन कराता इस तरह श्रीदेवी स्नान कर यावत् प्रायश्चित कर भोजन करके अपने स्थान पर बैठ जाय, पश्चात् वह (पुष्पनन्दी राजा) स्नान करे, भोजन करे और उदार मनुष्य संबंधी काम भोगों को भोगता हुवा रहता है.

टीकार्थ— ' सिरीए देविए मायाभत्ते यावि होत्था ' श्रीदेवी माता का बहुमानबुद्धि से भक्त था, यानी मातृभक्त था, ' कल्लाकाल्लिं ' प्रातःप्रातः– निरन्तर प्रभात में ' गंधवट्टएणं ' गंधचूर्णेन–सुगंधी चूर्ण से ' जिमियभुत्तुत्तरागयाए ' भोजन करने के पश्चात् स्वस्थान पर आजाती. शेष मूलार्थवत्.



होत्था, इमं च णं देवदत्ता देवी जेणेव सिरीदेवी तेणेव उवागच्छति २ त्ता सिरीदेवीं मज्जाइयं विरहितसयणिज्जंसि सुहपसुत्तं पासति पासित्ता दिसालोयं करेति करित्ता जेणेव भत्तघरे तेणेव उवागच्छति २ त्ता लोहदंडं परामुसति परामुसित्ता लोहदंडं तावेति तत्तं समजोइभूयं फुल्लकिंसुयसमाणं संडासएणं गहाय जेणेव सिरीदेवी तेणेव उवागच्छति २ त्ता सिरीदेवीए अवाणंसि पक्खिवेति, तते णं सा सिरीदेवी महया महया सद्देणं आरासित्ता कालधम्मुणा संजुत्ता।

अर्थ—पश्चात् वह श्रीदेवी किसी एक दिन मदिरापान करके एकान्त स्थान में शय्या पर सोती हुई थी, इस वक्त देवदत्ता देवी जहां श्रीदेवी है वहां आती है, आकर के श्रीदेवी को मदिरापान की हुई एकान्त में शय्या पर सोती हुई देखती है, देखकर दिशावलोकन करती है, करके जहां पर रसोड़ा है वहां पर आती है, आकर एक लोहे का सलिया लेती है, लेकर उस लोहदंड को अग्नि में तपाया, तपाकर अग्निसमान तथा खिलेहुवे केसूड़े के पुष्प जैसा लाल चोल हुवे उस दंड को संडासी से पकड़ कर जहां श्रीदेवी सोती है, वहां आती है, आकर श्रीदेवी के अपानस्थान (योनिस्थान में) वह सलिया डाल दिया, तब वह श्रीदेवी जोर २ से चिल्लाती हुई (तत्काल) मरण शरण हुई*.

* अहो! विषयवासना की मस्तीने कितना घोर जुल्म किया !!!

शिकारी द्वारा मारे जाने पर उस ही गंगपुर नगर में सेठ के कुल में उत्पन्न होगी, वहां सम्यक्त्व प्राप्त कर चारित्र अंगीकार कर सौधर्म देवलोक में (पहिले देव लोक में) जायगी, वहां से च्यवकर महाविदेह क्षेत्र में जन्म पाकर, दीक्षा ग्रहण कर यावत् मोक्ष को प्राप्त होगी—इस तरह निक्षेप कहना—नववें अध्ययन का अर्थ सम्पूर्ण हुवा.

टीकार्थ— ×× ×× ×× ×× ××

उपसंहार

इस नौवें अध्ययन में देवदत्ता के पूर्वभव मे सिंहसेन राजा की मोहान्धता वश किये गये जुल्मों से प्राप्त घोर नरक का दर्शन प्रत्यक्ष फल है, ऐसा बताया गया है—वर्तमान भव में कामान्धता से बहू ने सास की कैसी निर्लज्जतापूर्ण मृत्यु की इस से उस की सीमातीत किस कदर कदर्थना हुई, उस का दृश्य दिखाया गया है – भविष्य में कृत कर्मों से संसार भ्रमण का दुःख प्रदर्शित किया गया है – अन्त में पारमेश्वरी प्रव्रज्या के सहयोग से मोक्षपद प्राप्त करने का सौभाग्य प्रभुने स्पष्ट शब्दों में फरमा दिया है – मुमुक्षों ! यदि भव भ्रमण का तनिक भी भय हो तो नूतन कर्म बंधन को रोको और पूर्व कृतों का तपादिकों से क्षय करने का प्रयत्न करो; जिससे जीवन सफल हो.

दुःख विपाक का नौवां अध्ययन मूल—अर्थ और टीकार्थ सहित सम्पूर्ण हुवा.

विजयमित्र राजा के घर की अशोक वाटिका के पास में (अति निकट-अति दूर नहीं) होकर चलते हुवे उनने एक स्त्री देखी - वह शरीर में सूखी हुई थी, भूखी थी, मांस रहित थी, चलते समय उसके हाड़के खड़खड़ करते थे, उसका देह हाड़कों के ऊपर चमड़े से मढा हुवा था, उसने गीली साड़ी पहनी हुई थी; उसको कष्टकारक-करुणाजनक और नीरस शब्द करती हुई देखी, देखकर गौतम स्वामी को उस ही तरह (पूर्ववत्) विचार उत्पन्न हुवा और उस ही कदर भगवन्त से पृच्छा की - हे पूज्येश्वर ! वह स्त्री (जो मैं देखकर आया हूँ) पूर्वभव में कौन थी ?

टीकार्थः— ×× ×× ×× ×× ××

अंजूश्री का पूर्व भव

मूल—वागरणं - एवं खलु गोयमा ! तेणं कालेणं तेणं समएणं इहेव जंबुद्दीवे दीवे भारहे वासे इंदपुरे णामं णगरे होत्था, तत्थ णं इंददत्ते राया, पुढवीसिरी नामं गणिया होत्था वण्णओ, तते णं सा पुढवीसिरी

गणिया इंदपुरे णगरे बहवे राईसर जाव प्पभियओ बहूहिं चुन्नपओगेहि य जाव आभिओगेत्ता उरालाइं माणुस्सगाइं भोगभोगाइं भुंजमाणा विहरति।

अर्थ—भगवन्त ने उत्तर फरमाया-निश्चय इस प्रकार हे गौतम ! उस काल उस समय में इस ही जम्बूद्वीप नामक द्वीप में भरतक्षेत्र के अन्दर इन्द्रपुर नाम का नगर था, वहां पर इन्द्रदत्त नाम का राजा था, पृथ्वीश्री नाम की गणिका रहती थी, उस का वर्णन (पूर्ववत्) जानना. अनन्तर वह पृथ्वीश्री गणिका इन्द्रपुर नगर में बहुत से राजा, धनाढ्य यावत् सार्थवाह वगैरा को चूर्ण के प्रयोग से यावत् वश करके उनके साथ मनुष्य सम्बंधी उदार काम भोग भोगती हुई रहती है.

टीकार्थः— ×× ×× ×× ×× ××

वेश्या का नरक में प्रस्थान—अंजू श्री का जन्म

मूल—तते णं सा पुढवीसिरी गणिया एय कम्मा ४ सुबहुं समज्जिणित्ता पणतीसं वाससयाइं पर—

काम भोग भोगता हुवा रहने लगा; पश्चात् किसी एक दिन अंजू देवी के योनिशूल नामका रोग उत्पन्न हुवा, तब विजय राजा ने आदेशी पुरुषों को बुलाये, बुलाकर इस प्रकार आदेश किया-अहो देवों के प्यारे ! तुम जाओ वर्धमान पुर नगर के त्रिकोण आदि मार्ग पर जाकर इस प्रकार कहो—

टीकार्थ—' जहा तेतली ' यथा तेतली-जिस तरह तेतली; अर्थात् ज्ञाता धर्म कथा में (छट्ठे अंग में) तेतली पुत्र नामक मंत्री पोट्टिला नामकी कलाद मूषिकार सेठ की पुत्री की मांगनी कर स्वयं विवाह किया; उस ही तरह विजय राजा स्वयं परणा. दशमाध्ययनस्य विवरणं समाप्तम्.

मूल—एवं खलु देवाणुप्पिया ! विजयस्स रन्नो अंजूए देवीए जोणिसूले पाउब्भूते जो णं इत्थ विज्जो वा ६ (विज्जपुत्तो वा-जाणुओ वा- जाणुयपुत्तो वा- तेगिच्छि वा- तेगिच्छिपुत्तो वा) जाव उग्घोसेंति, तते णं ते बहवे विज्जा वा ६ इमं एयारूवं सोच्चा निसम्म जेणेव विजए राया तेणेव उवाग-च्छंति २ त्ता अंजूते बहवे उप्पत्तियाहिं ४ परिणामे माणा इच्छंति अंजूने देवीए जोणिसूलं उवसामित्तते नो संचाएंति उवसामितए, तते णं ते बहवे विज्जा य ६ जाहे नो संचाएंति अंजू देवीए जोणिसूलं उव-सामित्तते, ताहे संता तंता परितंता जामेव दिसिं पाउब्भूया तामेव दिसिं पडिगया ।

अर्थ—निश्चय करके इस प्रकार हे देवों के वल्लभ ! विजय मित्र राजा की अंजू रानी को योनिशूल उत्पन्न हुवा है, इसलिये यहां पर जो कोई वैद्य आदि (वैद्यपुत्र - ज्ञायक - ज्ञायककपुत्र - चिकित्सक - चिकित्सक पुत्र सब का अर्थ पहिले लिख दिया गया है) हो और वह इस व्याधि को शान्त कर सकता हो तो उसको राजा विपुल धन देगा, ऐसी उद्घोषणा करो; पश्चात् बहुत से वैद्यादि ने यह इस तरह की घोषणा सुनी, सुन कर जहां विजय राजा है वहां आते हैं, आकर के वैद्य वगैरा औत्पातादिक (वैनयिक - कार्मणिक - पारिणामिक) बुद्धि से विचार कर अंजू देवी का योनिशूल शान्त करने को इच्छ ने लगे यानी प्रयत्न करने लगे; परन्तु वे उपशान्त नहीं कर सके, जब कि वैद्यादि अंजूदेवी का योनिशूल शमन न कर सके तब वे सब शरीर-मन और दोनों से खेदित होकर जिस दिशा से आये थे उस ही दिशा में वापिस लौट गये।

टीकार्थः— ×× ×× ×× ×× ××

मूल—तते णं सा अंजूदेवी ताए वेयणाए अभिभूता समाणा सुक्का भुक्खा निम्मंसा कट्ठाइं कलुणाइं विसराइं विलवती, एवं खलु गोयमा ! अंजूदेवी पुरापोराणाणं जाव विहरति।

अर्थ—तदन्तर वह अंजूदेवी उस वेदना से परास्त होती हुई शरीर में सूख गई, भूख से दुर्बल होगई

मुक्त होकर यानी युवा अवस्था में तथारूप (होने चाहिये वैसे) स्थिवर + के पास पूर्ण समकीत को प्राप्त करेगा, बोध धारण कर दीक्षाग्रहण करेगा, आखीर काल धर्म प्राप्त कर सौधर्म देवलोक में उत्पन्न होगा. गौतम स्वामी ने पृच्छा कि- वह देवलोक की आयुष्य क्षय करके कहां जायगा? कहां उत्पन्न होगा? भगवन्त महावीर देव ने उत्तर दिया-हे गौतम! वह महाविदेह क्षेत्र मे उत्तम कुल में जन्मे गा, पाहिले अध्ययन के माफिक यावत् सिद्ध होगा-सर्व दुःखों का अन्त करेगा. इस प्रकार निश्चय करके हे जम्बो! श्रमण (भगवन्त महावीर) यावत् ने (मोक्ष को पधारे ने दुःख विपाक के दसवें अध्ययन का यह अर्थ (बयान) फरमाया. जम्बू स्वामी ने कहा-हे भगवन्त! वह इस ही प्रकार है-हे भगवन्त! वह इस ही प्रकार है- हर्षवशात् श्रद्धापूर्ण दो वख्त एक ही बात कही—दुःख विपाक का दसवाँ अध्ययन सम्पूर्ण हुवा १०.



+ स्थिविर (वृद्ध) तीन प्रकार के होते हैं—१ आयुस्थिविर-साठवर्ष से ऊपर की उम्र वाले २ चारित्र स्थिविर-वीस वर्ष की चारित्र पर्याय से ऊपर ३ ज्ञान स्थिविर-आचारांगादि शास्त्रों के वेत्ता ये महात्मा २-३ दरजे के स्थिविर प्रतीत होते हैं.

उपसंहार

इस दसवें अध्ययन में अंजू श्री ने पूर्व भव में यानी वेश्या के भव में विषय वासना में आसक्त होकर अनेक राजा प्रभृतियों को ब्रह्मचर्य से भ्रष्ट किये, इस से नरक यातना भोगनी पड़ी और इस भव में योनिशूल से अत्यन्त वेदना वेदन कर नरक का अतिथी बनना पड़ा; व्यभिचार का दारुण फल इस से स्पष्ट प्रतीत है अन्त में क्रमशः मोक्ष महल प्राप्त करेगी. महानुभावों ! आप अपने श्रेय के लिये व्यभिचार का त्याग कर ब्रह्मचारी बनने का सतत प्रयास करना; और अंजूश्री के समान आख़ीर मोक्षपद प्राप्त करने का प्रयत्न करना.

दुःख विपाक का दसवाँ अध्ययन मूल – अर्थ और टीकार्थ सहित सम्पूर्ण हुआ.

द्वितीय श्रुतस्कन्ध-सुखविपाक

❋ उत्थानिका ❋

मूल—तेणं कालेणं तेणं समएणं रायागिहे णगरे गुणासिले चेइए सोहम्मे समोसढे जम्बू जाव पज्जूवासमणे एवं वयासी – जति णं भंते ! समणेणं जाव संपत्तेणं दुहाविवाहगाणं अयमट्ठे पण्णत्ते सुहवि–वागाणं भंते ! समणेणं जाव संपत्तेणं के अट्ठे पन्नत्ते ? तते णं से सोहम्मे अणगारे जंबू अणगारं एवं वयासी – एवं खलु जंबू ! समणेणं जाव संपत्तेणं सुहाविवागाणं दस अज्झयणा पन्नत्ता; तंजहा–

सुबाहु १ भद्दनंदी य २ सुजाए य ३ सुवासवे ४ ॥

होत्था सव्वोउय० तत्थ णं कयवणमालपियस्स जक्खस्स जक्खाययणे होत्था दिव्वे, तत्थ णं हत्थिसीसे णगरे अदीणसत्तू णामं राया होत्था, महता० (हिमवन्तमहन्तमलयमंदरमहिंदसारे) तस्स णं अदीणसत्तुस्स रन्नो धारणीपामोक्खा देवीसहस्स ओरोहे यावि होत्था ।

अर्थ—इस प्रकार निश्चय करके हे जम्बो ! उस काल उस समय मे हस्तिशिर्ष नाम नगर था, ऋद्धिपूर्ण निर्भय * और समृद्धिशाली था, उस हस्तिशीर्ष नगर के बाहर इशान कोण मे पुष्पकरण्डक नामका उद्यान था, सर्व ऋतुओं के पुष्पो से शोभित था, वहां पर कृतवनमालप्रिय नाम के यक्ष का यक्षमंदिर था, वह बड़ा सुन्दर था, उस हस्तिशीर्ष नगर में अदीनशत्रु नाम का राजा राज्य करता था, वह बड़ा (हिमवन्त पर्वत समान महान् तथा मलयाचल पर्वत – मेरुगिरी – महेन्द्र पर्वत अथवा इन्द्र के सदृश सारभूत) था, उस अदीनशत्रु राजा के धारणी वगैरा एक हजार रानियाँ रणवास मे थीं–यहां पर धारणी पटरानी थी, ऐसा समझना.

टीकार्थ—' सव्वोउय ' यह इस प्रकार देखा जाता है– " सव्वोउयपुप्फफलसमिद्धे रम्मे नंदणवणप्पगासे पासाईए ४ " अर्थात् सर्व ऋतुओं के पुष्प और फलों की समृद्धिवाला, नन्दनवन (देववन) के समान सुन्दर और मन को प्रसन्न करने वाला ४

* जहां का राजा पूर्ण रक्षक हो और जहां की प्रजा के परस्पर प्रेम हो वह नगर ' निर्भय नगर ' कहा जाता है.

(दर्शनीय – देखने से नेत्रों को श्रम न हो, अभिरूप – मनोहर रूपवाला, प्रतिरूप – दर्शक को सुन्दर मालूम हो) ऐसा उद्यान था.

सुबाहुकुमार का जन्म–विवाह और एश आराम

मूल——तते णं सा धारणी देवी अन्नया कयाइ तंसि तारिसगंसि वासघरंसि सीहं सुमिणे पासति जहा मेहस्स जम्मणं तहा भाणियव्वं जाव सुबाहुकुमारे अलं भोगसमत्थं वा जाणंति, अम्मापियरो पंच पासायवडिंसगसयाइं करावेंति अब्भुग्गयमूसियपहासिए भवणं एवं जहा महाबलस्स रन्नो, णवरं पुप्फचूला–पामोक्खाणं पंचण्हं रायवरकन्नयसयाणं एगदिवसेणं पाणिं गिण्हावेंति, तहेव पंचसतिओ जाव उप्पिं पासायवरगते फुट्ट जाव विहरति ।

अर्थ——तत्पश्चात् उस धारणी पटरानी ने किसी एक वख्त उस प्रकार के यानी राजकुटुम्ब के योग्य ऐसे शयनगृह में स्वप्न के अन्दर सिंह देखा, जिस प्रकार मेघकुमार का जन्म (ज्ञाता सूत्र में) कहा है उस तरह

के ऊपर रहा हुआ 'फुट्ट' यहां पर यावत् शब्द से ऐसा देखा जाता है- " फुट्टमाणेहिं मुइंगमत्थएहिं " अर्थात् मृदंग के ऊपर के पुट मानो फटे जाते हों ऐसे जोरों से बजते थे; " वरतरुणीसंपउत्तेहिं " वरतरुणी संप्रयुक्तैः- श्रेष्ठ स्त्रियों से युक्त. ' बत्तीसइबद्धेहिं नाडएहिं ' बत्तीस पात्रो से युक्त नाटकों द्वारा नाचती थीं. " उवगिज्जमाणे उवलालिज्जमाणी माणुस्सए कामभोगे पच्चणुब्भवमाणे " ये स्त्रियॉ उस कुमार के गुण गान करती थीं, उस का लालन करती थीं यानी प्रेम उत्पन्न कराती थीं; इस प्रकार मनुष्य सम्बंधी काम भोगों का अनुभव करता था.

भगवन्त का पदार्पण—कुमार का व्रत ग्रहण करना

मूल—तेणं कालेणं तेणं समएणं समणे भगवं महावीरे समोसढे, परिसा निग्गया अदीणसत्तू जहा कोणिओ निग्गतो सुवाहु वि जहा जमाली तहा रहेणं निग्गते जाव धम्मो कहिओ राया परिसा गया, तते णं से सुवाहु कुमारे समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतिए धम्मं सोच्चा निसम्म हट्ट तुट्ठे उट्ठाए उट्ठेति जाव एवं वयासी—

अर्थः—उस काल उस समय में श्रमण भगवन्त महावीर देव समवसरे यानी उद्यान में पधारे, पर्षदा (प्रभु को वन्दनार्थ) निकली, अदीनशत्रु राजा जैसे कौणिक राजा (भगवन्त को वन्दनार्थ) गया वैसे यह भी निकला, इस ही तरह सुबाहु कुमार भी जमाली की तरह रथ में बैठ कर निकला यावत् धर्म देशना श्रवण की, राजा और पर्षदा अपने स्थान पर वापस लौट गई, तत्पश्चात् उस सुबाहु कुमार ने श्रमण भगवन्त महावीर देव के पास धर्म सुन कर हृदय में धारण कर हर्षित–आनन्दित होकर खड़े होने की क्रिया से खड़ा हुवा यावत् (भगवन्त को वन्दन नमस्कार करके) इस प्रकार प्रार्थना की —

टीकार्थ— ‘ जहा कूणिए ’ यथा कौणिकः— कौणिक राजा की तरह; अर्थात् जैसे औपपातिक सूत्र (उववाई सूत्र) मे कौणिक राजा का भगवन्त को वदन करने के लिये निकलने का बयान किया है इस प्रकार यहां भी वर्णन करना. ‘ सुबाहु वि जहा जमाली तहा रहेण निग्गओ ’ अर्थ मूलार्थ वत्. विशेषता में – भगवती सूत्र मे जिस तरह वर्णन किया है कि जमाली भगवन्त का जमाई भगवन्त को वन्दन करने के लिये रथ मे बैठ कर निकला है उस ही प्रकार यह भी (सुबाहु कुमार भी) निकला, ऐसा जानना. यहां पर यावत् करण से ऐसा समझना— “ समणस्स भगवओ महावीरस्स छत्ताइछत्तं पडागाइपडागं विज्जाचारणे जंभए य देवे ओवयमाणे उप्पयमाणे य पासति पासित्ता रहाओ पचारुहइ पचोरुहित्ता समणं भगवं महावीरं वंदइ नमंसइ वंदित्ता नमंसित्ता ” अर्थात् श्रमण भगवन्त महावीर देव का छत्र से छत्रित प्रातिहार्य से शोभित विद्याचारण और जृंभक देवों को ऊँचे

अर्थात्- हे भगवन्त ! मैं निर्ग्रन्थ प्रवचन पर श्रद्धा करता हूँ, हे भगवन्त ! मैं निर्ग्रन्थ प्रवचन को अङ्गीकार करता हूँ, हे प्रभो ! आप देवानुप्रिय के पास बहुतसे राजा - धनवन्त - कोतवाल - मंडव गाम के अधिपति - कौटुम्बिक - सेठ - सार्थवाह वगैरा मुंडित होकर घरबार छोड़ अनगार (मुनि-साधु) रूप चारित्र अङ्गीकार किया है; मगर मैं (अधन्य हूँ) उस तरह दीक्षा लेने समर्थ नहीं, इसलिये मैं तो आप प्रभु के पास ५ अणुव्रत और ७ शिक्षाव्रत रूप गृहस्थ धर्म अङ्गीकार करना चाहता हूँ ! भगवन्त महावीर देवने फरमाया— विलम्ब मत करो. ' तमेव ' इससे यह जानना- " तमेव चाउघंटं आसरहं " अर्थ मूलार्थवत्. ' जामेव ' इत्यादि इस प्रकार जानना— " जामेव दिसं पाउब्भूते तामेव दिसं पडिगए " अर्थ मूलार्थ के समान.

कुमार के लिये गणधर महाराज की पृच्छा

मूल——तेणं कालेणं तेणं समएणं जेट्ठे अंतेवासी इंदभूई जाव एवं वयासी—अहो णं भंते सुबाहु-कुमारे इट्ठे इट्ठरूवे कंते कंतरूवे पिए पियरूवे मणुन्ने मणुन्नरूवे मणामे मणामरूवे सोमे सोमरूवे सुभगे

सुभगरूवे पियदंसणे सुरूवे, बहुजणस्सवि य णं भंते ! सुबाहुकुमारे इट्ठे ५ सोमे ४ साहुजणस्सवि णं य भंते ! सुबाहुकुमारे इट्ठे इट्ठरूवे ५ जाव सुरूवे सुबाहुणा भंते ! कुमारे णं इमा एयारूवा उराला माणुस्सरिद्धी किण्णालद्धा किण्णापत्ता किण्णा अभिसमन्नागया के वा एस आसि पुव्वभवे ?

अर्थ—उस काल उस समय में बड़े शिष्य श्री इन्द्रभूति जी ने (गौतम स्वामी जी ने) भगवन्त को इस प्रकार निवेदन किया– अहो भगवन्त ! सुबाहुकुमार इष्ट है, इष्ट रूपवाला है, कान्त (इच्छने योग्य) है, कान्त स्वरूप है, प्रिय है, प्रियस्वरूप है, मनोज्ञ (मनको रुचे ऐसा) है, मनोज्ञ रूपवाला है, मनोरम (स्मरण से जाना जाय) है, मनोरम रूपवाला है ! सौम्य (शान्त दृष्टि वाला) है, सौम्य रूप है, सुभग (वल्लभ) है, सुभग स्वरूप है, देखने में प्रिय है, स्वरूप वान् है, – विशेषार्थ टीकार्थ में— हे भगवन्त ! वह सुबाहु कुमार बहुत लोगों को इष्टादि ५ (पूर्ववत्) है, सौम्यादि ४ (पूर्ववत्) है, हे भगवन्त ! सुबाहु कुमार साधुजनों को (सज्जनों को) इष्टादि ५ है, यावत् स्वरूपवान् है, हे देवाधिदेव ! सुबाहु कुमार यह इसप्रकार की (प्रत्यक्ष मौजुद है) प्रधान मनुष्य संबंधी सम्पदा कैसे (किस करणी से) उपार्जन की–कैसे प्राप्त करी और कैसे भोगोपभोग में काम आई तथा यह सुबाहु कुमार पूर्व भव में कौन था ? इत्यादि प्रश्न किये.

टीकार्थः— 'इंदभूई' यहां पर यावत् करण से "नामं अणगारे गोयमगोत्तेण" यानी इन्द्रभूति नाम के अनगार गौतम

तेणं कालेणं तेणं समएणं धम्मघोसा णामं थेरा जातिसंपन्ना जाव पंचहिं समणसएहिं सद्धिं संपुरिवुडा पुव्वाणुपुव्विं चरमाणा गामाणुगामं दुइज्जमाणा जेणेव हत्थिणाउरे णगरे जेणेव सहस्संबवणे तेणेव उवागच्छइ २ त्ता अहापडिरूवं उग्गहं उगिण्हित्ता णं संजमेणं तवसा अप्पाणं भावेमाणा विहरन्ति ।

अर्थ—भगवान् महावीर स्वामी फरमाते हैं—निश्चय इस प्रकार हे गौतम ! उस काल उस समय में इस ही जम्बू द्वीप नामक द्वीपान्तरगत भरत खण्ड में हास्तिनापुर नाम का नगर था, ऋद्धिवाला निर्भय और समृद्धिशाली था, उस हस्तिनापुर नगर मे सुमुख नामका एक गाथापति (गर्भश्रीमन्त) वसता था, वह पूर्ण धनाढ्य था. उस काल उस समय के अन्दर धर्मघोष नामके स्थिविर (दीर्घपर्यायी साधु) जातिसम्पन्न यावत् (जिसतरह सुधर्म स्वामी का वर्णन किया उस तरह यहां पर कहना) पॉच सौ साधुओं के साथ रहे हुवे पूर्वानुपूर्वी (क्रमशः) चलते हुवे ग्रामानुग्राम (एक गांव से दूसरे गांव) विहार करते हुवे जहां पर हस्तिनापुर नगर है जहां पर सहस्राम्रवन (हजार आम के वृक्षों वाला वन) वाला उद्यान है वहां पर आते हैं, आकर यथाप्रतिरूप (मुनियों के योग्य) अवग्रह (मुकरर स्थान) को ग्रहण कर संयम-तप से आत्म भावना करते हुवे रहते हैं.

टीकार्थ—' जाइ संपन्ना ' जातिसंपन्नः- उत्तम जाति वाले. यहां पर यावत् करण से ऐसा देखा जाता है-" कुलसंपन्ना बलसंपन्ना विणयणाणदंसणचरित्तलज्जालाघवसंपन्ना ओयंसि लेयंसि वचंसि जसंसी " इत्यादि. अर्थात्-उत्तम कुल वाले, बलवाले,

विनय – ज्ञान दर्शन – चारित्र – लज्ञा – लघुता गुणयुक्त, प्रभावशाली, तेजस्वी, वचस्वी और यशवन्त थे. 'दुइज्जमाणा' द्रवन्तः + गछन्तः–चलते हुवे.

तपोधन मुनि को सुमुख गाथापति का पूर्ण–भावसे दान देना.
दान से अपूर्व लाभ

मूल—तेणं कालेणं तेणं समएणं धम्मघोसाणं थेराणं अंतेवासी सुदत्ते णामं अणगारे उराले जाव लेस्से मासं मासेणं खममाणे विहरति, तए णं से सुदत्ते अणगारे मासक्खमण पारणगंसि पढमाए पोरसीए सज्झायं करेति जहा गोयम सामी तहेव धम्मघोसे (सुहम्मे) थेरे आपुच्छात्ति जाव अडमाणे सुमुहस्स गाहावतिस्स गेहे अणुप्पविट्ठे, तए णं से सुमुहे गाहावती सुदत्तं अणगारं एज्जमाणं पासति २ त्ता हट्ठतुट्ठे आसणातो अब्भुट्ठेति २ त्ता पायपिठाओ पच्चारुहेति २ त्ता पाउयातो ओमुयाति २ त्ता एगसाडियं उत्तरा–

आहयाओ देवदुंदुहीओ अंतरावि य णं आकासे अहो दानमहो दानं घुट्ठे य हत्थिणाउरे सिंघाडग जाव पहेसु बहुजणो अन्नमन्नस्स एवं आइक्खाति ४– धण्णे णं देवाणुप्पिए ! सुमुहे गाहावइ ५ [सुकय पुन्ने कयलक्खणे सुलद्धे णं मणुस्स जम्मे सुकयत्थ] जाव तं धन्ने णं देवाणुप्पिया ! सुमुहे गाहावई ।

अर्थ—तत्पश्चात् उस सुमुख गाथापति ने उस प्रकार की यानी निर्दोष द्रव्य शुद्धि से (दातार शुद्धि से– ग्राहक शुद्धि से) तीन प्रकार की करण शुद्धि से (विशेष अर्थ टीकार्थ में) सुदत्त अनगार को प्रतिलाभते हुवे अपना संसार परित्त * (परिमित – अमुक हद में) किया, यहां पर इसने मनुष्य का आयुष्य बांधा तथा इस वख्त इसके घर में ये पांच दिव्य प्रकट हुवे; वे ये हैं—१ पृथ्वी पर वृष्टि हुई (साड़े बारह क्रोड़ सोनैयों की वृष्टि हुई). २ पांच वर्णों के पुष्पों की वर्षा हुई. ३ चेलोत्क्षेप यानी वस्त्रों की वृष्टि हुई. ४ आकाश के अन्दर देवदुंदुभी की ध्वनि हुई. ५ आकाश में अहो दानं–अहोदानं की उद्घोषणा हुई; इस समय हस्तिनापुर नगर के त्रिकोण यावत् राजमार्ग में बहुत से लोग परस्पर इस प्रकार बात करने लगे–अहो देवों के प्यारे ! सुमुख गाथापति धन्य है (कृतपुण्य है–सुलक्षण वाला है–उत्तम मनुष्य जीवन प्राप्त किया है–इस की समृद्धि सफल हुई) यावत् इससे

* जिसका जघन्य काल अन्तर मुहूर्त्त और उत्कृष्ट काल देशोन अर्धपुद्गलपरावर्त हो उसे ' परित्त संसार ' कहते हैं

हे देवों के वल्लभ ! वह सुमुख नाम का गाथापति धन्य है.

टीकार्थ—' तस्स सुमुहस्स ' तस्य सुमुखस्य–विभक्ति के परिणाम से यानी बदलने से ' तेन सुमुहेन ' ऐसा जानना अर्थात् सुमुख द्वारा उससे यानी असनादि दान से. ' दव्वसुद्धेणं ' द्रव्यतः शुद्धेन–द्रव्य शुद्धि से यानी प्रासुक (निर्दोष) आहारादि से. यहां पर अन्य पद भी हैं–" गाहयसुद्धेणं–दायगसुद्धेणं " ग्राहकशुद्धेन, दायकशुद्धेन–लेने वाला चारित्र गुणयुक्त हो, इस ग्राहक शुद्धि से–देने वाला उदारतादि गुण सहित हो, इस दातार शुद्धि से. इस ही लिये कहा है–' तिविहेणं ' त्रिविधेन उपरोक्त तीन प्रकार के लक्षणयुक्त से. ' तिकरण सुद्धेणं ' त्रिकरण शुद्धेन–मन, वचन, काया (विचार–वाणी–वर्तन) इस दायक के करणत्रय की शुद्धि से. ' एवं आइक्खइ ' सामान्येन आचष्टे–साधारणता से कहने लगे; यहां पर तीन पद दूसरे भी देखे जाते हैं–' एवं भासइ ' विशेषत आचष्टे–इस कदर विशेषता से कहने लगे. ' एवं पन्नवेति–एवं परूवेति ' एवं प्रज्ञापयति, एवं प्ररूपयति–इस प्रकार प्रज्ञापना करने लगे, इस तरह प्ररूपणा करने लगे; ये दोनों पद उपरोक्त दो पदों की व्याख्या के लिये जानना; अथवा आख्याति और भाषते, ये दो शब्द प्रकट वचनों से कहते हैं और प्रज्ञापयति शब्द युक्ति से बोध करता है एवं प्ररूपयति शब्द भेद पूर्वक कहता है. ' धन्ने णं देवाणुप्पिया ! सुमुहे गाहावई ' अर्थ मूलार्थ के माफिक. यहां पर यावत् शब्द से ऐसा दिखाई देता है–" पुन्ने णं देवाणुप्पिया ! सुमुहे गाहावई एवं कयत्थे णं कयलक्खणे णं सुद्धे णं सुमुहस्स गाहावइस्स जम्मजीवियफले जस्स णं इमा एयारूवा उराला माणुस्सरिद्धि लद्धा पत्ता अभिसमन्नागया; तं धन्ने णं देवाणुप्पिया ! सुमुहे गाहावइ

अर्थ—हे जगत पूज्य ! सुबाहु कुमार आप देवों के प्रीतिस्थान के पास गृहस्थाश्रम छोड़ कर मुनिदीक्षा लेने में समर्थ होंगे ? भगवन्त ने फरमाया–हां समर्थ होगा ! तब ज्ञानी गौतम ने श्रमण भगवन्त महावीर देवको वंदन–नमस्कार किया, करके संयम–तप द्वारा आत्म–भावना करते हुवे विचरते हैं.

टीकार्थ— ×× ×× ×× ×× ××

मूल—तते णं से समणे भगवं महावीरे अन्नया कयाइ हत्थिसीसाओ णगराओ पुप्फगउज्जाणाओ कयवणमाल जक्खाययणाओ पडिणिक्खमति २ त्ता बाहिया जणवयविहारं विहरति, तते णं से सुबाहु कुमारे समणोवासए जाते अभिगयजीवाजीवे जाव पडिलाभेमाणे विहरति ।

अर्थ—तत्पश्चात् श्रमण भगवन्त महावीर देव ने किसी एक वख्त हस्तिशिर्ष नगर से, पुष्पोद्यान से, कृतवनमाल यक्ष के आयतन से विहार किया, करके बाहार अन्य देशों में विचरने लगे, बाद वह सुबाहु कुमार श्रमणोपासक (साधुओं की उपासना करने वाला–श्रावक) होने से जीवाजीव का जानने वाला हुवा, यावत् प्रतिलाभता हुवा (साधुजन को आहार–पानी बहरता हुवा) रहता है.

टीकार्थ—' अभिगय जीवाजीवे ' अर्थ मूलार्थवत्. यहां पर यावत् करण से–" उवलद्धपुन्नपावे " यहां से लेकर

" अहापडिग्गहिएहिं तवोकम्मेहिं अप्पाणं भावेमाणे विहरइ " तक. अर्थात् – पुण्य पाप को जानने वाला, अङ्गीकार किये गये के अनुसार तपक्रिया से (व्रत पालन से) आत्म भावना करता हुवा रहता है.

दीक्षा के लिये कुमार की पूर्ण अभिलाषा भगवन्त का पदार्पण

मूल—तते णं से सुबाहु कुमारे अन्नया कयाइं चाउद्दसट्ठमुदिट्ठपुण्णमासिणीसु जेणेव पोसहसाला तेणेव उवागच्छति २ त्ता पोसहसालं पमज्जति २ त्ता उच्चारपासवण भूमिं पडिलेहति २ त्ता दब्भसंथारगं संथरति २ त्ता दब्भसंथारं दुरूहइ २ त्ता अट्ठमभत्तं पगिण्हइ २ त्ता पोसहसालाए पोसहिते अट्ठमभत्तिएं पोसहं पडिजागरमाणे विहरति ।

अर्थ—तब वह सुबाहु कुमार कदाचित चउदस – आठम – अमावस्या – पूर्णिमा के दिन जहां पौषधशाला

मसंवाहसंन्निवेसा " अर्थात् १ – नगर-कर्बट २ – मंडप-खेट ३ – द्रोणमुख ४ – पाटण ५ – निगमन ६ – आश्रम ७ – संवाध ८ – सन्निवेस को धन्य है. ' राइसर ' यहां पर यह जानना— ' राइसरतलवरमाडंवियकोडुंवियइब्भसेट्ठिसत्थवाहपभियओ " यानी राजा – ईश्वर – कोतवाल – मंडपधारी – कोटुम्बिक – धनाढ्य – सेठ – सेनापति – सार्थवाह वगैरा धन्य है. ' मुंडा ' मुंडिताः – शिर मुडित, यहां पर यावत् करण से ऐसा जानना— " भवित्ता आगाराओ अणगारियं " गृह त्याग कर साधु हुवे. ' पुव्वाणुपुव्वि ' यावत् करण से – " चरमाणे गामणुगामं " इनका अर्थ मूलार्थ के मुआफिक.

मूल—तते णं समणे भगवं महावीरे सुवाहुस्स कुमारस्स इमं एयारूवं अज्झत्थियं जाव वियाणित्ता पुव्वाणुपुव्विं जाव दूइज्जमाणे जेणेव हत्थिसीसे णगरे जेणेव पुप्फगउज्जाणे जेणेव कयवणमालपियस्स जक्खस्स जक्खाययणे तेणेव उवागच्छइ उवागच्छित्ता आहापडिरूवं उग्गहं गिण्हित्ता संजमेणं तवसा अप्पाणं भावेमाणे विहति, परिसा राया निग्गया ।

अर्थ—तदनन्तर श्रमण भगवन्त महावीर देव सुवाहु कुमार की यह इस प्रकार की प्रार्थना को जान कर अनुक्रम से यावत् विचरते हुवे जहां हस्तिशीर्ष नगर है, जहां पुष्पकरण्डक नाम का उद्यान है, जहां यक्ष का

१–छोटा गाम २–धूल के किले वाला गाम ३–जल और स्थल के मार्ग वाला गाम ४–जल या स्थल दो में से एक किसी मार्ग वाला बड़ा शहर ५–व्योपार का गाम ६–तापस लोगों का स्थान ७–पर्वत पर किले के बीच का गाम ८–स्थान विशेष—पाड़ा.

यक्षमंदिर है वहाँ पर पधारे, पधार कर यथायोग्य वनपाल की आज्ञा से अवग्रह (उपाश्रय) को ग्रहण कर संयम और तप से आत्म भावना करते हुवे रहते हैं. पूर्ववत् नगर से पर्षदा और राजा (प्रभु को वन्दनार्थ) निकले.

टीकार्थः— ×× ×× ×× ×× ××

प्रभु की देशना का श्रवण—पूर्णप्रेम से दीक्षा का अङ्गीकार और उसका यथार्थ पालन.

मूल—तते णं से सुबाहु कुमारे तं महया जहा पढमं तहा निग्गओ धम्मो कहिओ परिसा राया पडिगया, तते णं से सुबाहु कुमारे समणस्स भगवतो महावीरस्स अंतिए धम्मं सोच्चा, निसम्म हट्ठ तुट्ठ जहा मेहे तहा अम्मापियरो आपुच्छति णिक्खमणाभिसेयो तहेव जाव अणगारे जाते ईरियासमिए जाव बंभयारी ।

तप (आत्म शोधन के लिये तपस्या) से आत्मा को (देह को) शुष्क करके साठ भक्त (भोजन) को अनसन से छेद कर यानी एक मास का अनसन करके, आलोचना तथा प्रतिक्रमण (कृतपापों का प्रायश्चित अथवा कृत पापों से वापिस फिरना) करके, समाधिपूर्वक कालमास में काल करके सौधर्म देवलोक (पहिला देवलोक) में देवपने उत्पन्न हुवा.

टीकार्थ— ×× ×× ×× ×× ××

सुबाहु कुमार का अन्तिम सुन्दर निर्णय

मूल—से णं ततो देवलोगाओ आउक्खएणं भवक्खएणं ठिइक्खएणं अणंतरं चयं चइत्ता माणुस्सं विग्गहं लभिहिइ २ त्ता केवलं बोहि बुज्झिहिति २ त्ता तहारुवाणं थेराणं अंतिए मुंडे जाव पव्वइस्सति, से णं तत्थ बहूइं वासाइं सामण्णं पाउणिहिइ आलोइय पडिक्कंते समाहि पत्ते कालगते सणतकुमारे कप्पे देवत्ताए उववन्ने, से णं ताओ देवलोयाओ ततो माणुस्सं पवज्जा बंभलोए माणुस्सं ततो महासुक्के ततो माणुसं ततो

आणते देवे ततो माणुस्सं ततो आरणे देवे ततो माणुस्सं ततो सव्वट्ठसिद्धे, से णं ततो अणंतरं उवट्टित्ता महाविदेहे वासे जाव अड्ढाइं जहा दढपइन्ने सिज्झिहिति, एवं खलु जम्बू ! समणेणं जाव संपत्तेणं सुह-विवागाणं पढमस्स अज्झयणस्स अयमट्ठे पन्नत्ते. (सू०३३) पढमं अज्झयणं समत्तं ॥ १ ॥

अर्थ—तब वह (सुबाहु का जीव) देवलोक से आयुष्य क्षय होने पर, भवक्षय होने पर, स्थिति क्षय होने पर अन्तर रहित च्यवन के समय च्यव कर (मरकर) मनुष्य शरीर (औदारिक शरीर) प्राप्त करेगा, करके सम्पूर्ण बोधिको (समकित को) प्राप्त करेगा, करके तथारूप स्थिविर मुनि के पास मुंडित होकर यावत् दीक्षा ग्रहण करेगा; वहां पर वह बहुत वर्षों तक साधुपन पालकर, आलोचना-प्रतिक्रमण करके समाधि पूर्वक काल धर्म प्राप्त कर सनतकुमार देवलोक में (तीसरे देवलोक में) देवपने उत्पन्न होगा; फिर वह देवलोक से च्यवकर मनुष्यभव प्राप्त करेगा, वहां दीक्षा लेकर ब्रह्मलोक में (पांचवें देवलोक में) देव होगा, वहां से च्यवकर मनुष्य भव पाकर दीक्षा लेकर महाशुक्र में (सातवें देवलोक में) देव होगा; वहां से च्यवकर मनुष्यभव पाकर दीक्षा लेकर आनत में (नवें देवलोक में) देव होगा; वहां से च्यवकर मनुष्वभव प्राप्त कर, दीक्षा लेकर आरण्य में (ग्यारहवें देवलोक में) देव होगा; वहां से च्यवकर मनुष्यभव प्राप्त कर दीक्षा ग्रहण कर सर्वार्थसिद्ध विमान

❋ दूसरा अध्ययन ❋

(भद्रनन्दी कुमार)



मूल—बितियस्स णं उक्खेवो – एवं खलु जम्बू ! तेण कालेणं तेणं समएणं उसभपुरे णगरे थूभकरंडउज्जाणे धन्नो जक्खो धणावहो राया सरस्सई देवी सुमिणदंसणं कहणं जम्मणं बालत्तणं कलाओ य जुव्वणे पाणिग्गहणं, दाओ पासाद भोगा य जहा सुबाहुयस्स, नवरं भद्दनंदी कुमारे सिरिदेवी पामोक्खाणं पंचसया । सामी समोसरणं सावगधम्मं पुव्वभवपुच्छा महाविदेहे वासे पुंडरीकिणी णगरी विजयते कुमारे जुगबाहु तीत्थयरे पडिलाभिय माणुस्साउए निबद्धे इहं उपन्ने सेसं जहा सुबाहुयस्स जाव महाविदेहे वासे सिज्झिहिति बुज्झिहिति मुच्चिहिति परिनिव्वाहिति सव्वदुक्खाणमंतं करेहिति – बितियं अज्झयणं सम्मत्तं ॥ २ ॥

अर्थ—द्वितिय अध्ययन का उत्क्षेप (प्रस्तावना – बयान) करते हैं – सुधर्मस्वामी जम्बु अनगार को फरमाते हैं – इस प्रकार निश्चय है जम्बो ! उस काल उस समय में ऋषभपुर नाम का नगर था, उसके समीप में स्तूपकरण्डक नामक उद्यान था, उसमें धन्य नामका यक्ष था, (यक्षायतन था) उस नगर में धनावह नामक राजा राज्य करता था, उसके सरस्वती नामकी पट्टरानी थी, उसने एक वख्त स्वप्न देखा, पतिदेव को कहा, पुत्र को जन्म दिया, बालकने बाल्यावस्था में कलाएँ प्राप्त कीं, यौवन वय में ५०० पाँच सौ कन्याओं के साथ विवाह किया, पिता जी ने प्रीतिदान दिया, ५०० महल बनवा दिये, महलों के ऊपर अपनी प्रियाओं के साथ कुमार क्रीड़ाएँ करने लगा; इत्यादि सर्व पहिले अध्ययन में प्रकाशित सुबाहु कुमार के माफिक जानना; मात्र अन्तर इतना है कि— इसका नाम भद्रनन्दी कुमार था और श्रीदेवी आदि ५०० भार्याओं थीं – किसी एक वख्त वहां पर श्रमण भगवान् महावीर देव समवसरे, उस वख्त भद्रनन्दी कुमारने प्रभु की देशना सुनकर श्रावकधर्म अङ्गीकार किया; गौतम स्वामी ने कुमार का पूर्वभव पूछा, भगवन्त ने उत्तर फरमाया कि— यह कुमार पूर्वभव में महाविदेह क्षेत्रान्तरगत पुंडरीकिणी नगरी में विजय नामका कुमार था, युगबाहु तीर्थंकर को प्रतिलाभे थे (दान दिया था) उससे मनुष्य का आयुष्य बांधकर यहां उत्पन्न हुवे, बाकी सर्व सुबाहु कुमार की तरह यावत् (इस भव में चारित्र लेकर देव मनुष्यों के भव करके) प्रान्ते महाविदेह क्षेत्र में मनुष्य होकर चारित्र अङ्गीकार करके मोक्ष

❋ चौथा अध्ययन ❋

(सुवासव कुमार)



मूल—चोत्थस्स उक्खेवो–विजयपुरं णगरं णंदणवणं [मणोरमं] उज्जाणं असोगो जक्खो वासवदत्ते राया कण्हादेवी सुवासवे कुमारे भद्दापामोक्खाणं पंचसया जाव पुव्वभवे कोसंबी णगरी धणपाले राया वेसमणभद्दे अणगारे पडिलाभिते इह जाव सिद्धे–चोत्थं अज्झयणं सम्मत्तं ॥ ४ ॥

अर्थ—चौथे अध्ययन का उत्क्षेप करते हैं–विजयपुर नामक नगर था, नन्दनवन (मनोरम) संज्ञक उद्यान था, उसके बाहर अशोक यक्ष (यक्षायतन) था, वासवदत्त राजा राज्य करता था, उसके कृष्णादेवी रानी थी और सुवासव कुमार था, उसका भद्रा वगैरा पांच सौ कन्याओं से विवाह किया था, यावत् (प्रभु पधारे, देशना सुनी, श्रावकव्रत लिये) गौतम स्वामी के पूछने पर भगवन्त ने पूर्वभव फरमाया—कौशंबी नामकी नगरी थी, वहां का राजा धनपाल था, उसने वैश्रमणभद्र नामक मुनि को दान दिया, इससे यहां उत्पन्न हुवा, सुबाहु

कुमारवत् यावत् (मनुष्य और देव के भव कर चारित्र अङ्गीकार कर महाविदेह क्षेत्र में) मोक्ष प्राप्त करेगा—चौथे अध्ययन का अर्थ सम्पूर्ण हुवा. ॥ ४ ॥

टीकार्थ— ×× ×× ×× ×× ××

चौथा अध्ययन समाप्त.



॥ पाँचवां अध्ययन ॥

(जिनदास कुमार)



मूल—पंचमस्स उक्खेवो—सोगंधिया नगरी नीलासोहे उज्जाणे सुकालो जक्खो अप्पडिहओ राया सुकन्नादेवी महचंदे कुमारे तस्स अरहदत्ता भारिया जिणदासो पुत्तो, तित्थयरागमणं जिणदासपुव्व-भवो, मज्झमीया णगरी मेहरहो राया सुधम्मे अणगारे पडिलाभिए जाव सिद्धे—पंचमं अज्झयणं सम्मत्तं ॥५॥

सुनी, श्रावकव्रत अङ्गीकार किये) पूर्वभव गौतम स्वामी ने पूछा ? प्रभुने उत्तर दिया–मणिवया नामकी नगरी थी, उसमे मित्र नामक राजा राज्य करता था, संभूतविजय अनगार को दान देने से यावत् (देव और मनुष्य के भवो को कर, चारित्र अङ्गीकार कर) सुबाहुकुमार की तरह महाविदेह क्षेत्रमें मोक्ष को प्राप्त करेगा–छट्ठे अध्ययन का अर्थ सम्पूर्ण हुवा.

टीकार्थ— ×× ×× ×× ×× ××

छट्ठा अध्ययन समाप्त .

॥ सातवाँ अध्ययन ॥

(महावल कुमार)



मूल—सत्तमस्स उक्खेवो–महापुरं णगरं रत्तासोगं उज्जाणं रत्तयाओ जक्खो वले राया सुभद्दादेवी महव्वले कुमारे रत्तवई पामोक्खाओ पंचसया कन्ना पाणिग्गहणं तित्थयरागमणं जाव पुव्वभवो मणिपुरं

णगरं णागदत्ते गाहावती इंदपुरे अणगारे पडिलाभिते जाव सिद्धे–सत्तमं अज्झयणं सम्मत्तं ॥ ७ ॥

अर्थ— सातवें अध्ययन का उत्क्षेप (बयान) करते हैं– महापुर नामका नगर था, उसके बाहर रक्त–अशोक संज्ञक उद्यान था, उसमें रक्तपाद नामक यक्ष (यक्षायतन) था, इस नगर में बल नामका राजा राज्य करता था, उसके सुभद्रा नामकी रानी और महाबल नामका कुमार था, रक्तवती वगैरा ५०० पाँच सौ राज-कन्याओं के साथ इस राज कुमार का विवाह हुवा था; तीर्थंकरदेव का पदार्पण हुवा यावत् (देशना सुनी, श्रावकव्रत अङ्गीकार किये) गौतम गणधर ने पूर्वभव पूछा ? प्रभु ने उत्तर बक्षा – मणिपुर नामका नगर था, उसमें नागदत्त गाथापति रहता था, उसने इन्द्रपुर नामके अनगार (साधुमहात्मा) को आहार दान दिया था उससे यावत् (महाबल कुमार हुवा, चारित्र लिया, देव – मनुष्यों के भव करके चारित्र अङ्गीकार कर सुबाहु कुमार की तरह महाविदेह क्षेत्र में) मोक्ष जावेगा— सातवें अध्ययन का अर्थ सम्पूर्ण हुवा ।

टीकार्थ— ×× ×× ×× ×× ××

सातवाँ अध्ययन समाप्त.

था, उसमें पूर्णभद्र संज्ञक यक्ष था, दत्त नामक राजा राज्य करता था, रक्तवती रानी थी और महाचन्द्र नामक कुमार था, युवराज पद धारक था; श्रीकान्ताप्रमुख ५०० पाँच सौ कन्याओं के साथ उसका विवाह करादिया था, यावत् (तीर्थंकर देव पधारे, देशना सुनी, श्रावक व्रत अङ्गीकार किये) गौतम गणधर ने पूर्वभव पूछा ? प्रभुने फरमाया – तिगिच्छी नामकी नगरी थी, जितशत्रु नामका राजा था, उसने धर्मवीर्य अनगार को दान दिया था, जिससे यावत् (महाचन्द्र कुमार हुवा, चारित्र लेकर देवलोक गया, मनुष्य-देव के भव करके आखीर चारित्र लेकर सुबाहु कुमार की तरह) महाविदेह क्षेत्र में मोक्षपद प्राप्त करेगा— नवें अध्ययन का अर्थ सम्पूर्ण हुवा.

टीकार्थ— × × × × × × × × × ×

नवाँ अध्ययन समाप्त.

❋ दसवाँ अध्ययन ❋

(वरदत्त कुमार)



मूल—जति णं भंते ! दसमस्स उक्खेवो—एवं खलु जम्बू ! तेणं कालेणं तेणं समएणं सायेयं

णामे णगरे होत्था उत्तरकुरु उज्जाणे पासामिओ जक्खो मित्तनंदी राया सिरीकन्ता देवी वरदत्ते कुमारे वर–सेणपामोक्खाणं पंच देवीसया तित्थयरागमणं सावगधम्मं पुव्वभवो पुच्छा सतदुवारे नगरे विमलवाहणे राया धम्मरुचि नामं अणगारं एज्जमाणे पासाति पासित्ता पडिलाभिते समाणे मणुस्साउते निबद्धे इहं उपन्ने ससं जहा सुबाहुयस्स कुमारस्स चिंता जाव पवज्जा कप्पंतरिओ जाव सव्वट्ठसिद्धे ततो महाविदेहे जहा दढपइन्नो जाव सिज्झिहिति बुज्झिहिति मुच्चिहिति परिणिव्वाहिति सव्वदुखाणमंतं करेहिति । एवं खलु जम्बू ! समणेणं भगवया महावीरेणं जाव संपत्तेणं सुहविवाहगाणं दसमस्स अज्झयणस्स अयमट्ठे पन्नत्ते सेवं भंते ! सेवं भंते ! सुहविवागा (सू० ३४) दसमं अज्झयणं सम्मत्तं ॥ १० ॥

अर्थ— जम्बू स्वामी ने स्वधर्म स्वामी से पूछा – जो हे पूज्य गुरुदेव ! श्रमण भगवन्त महावीर देव यावत् मोक्ष को पधारे ने नवें अध्ययन का इस तरह बयान किया तो हे स्वामिन ! दसवें अध्ययन का क्या अर्थ फरमाया ? — इस कदर दसवें अध्ययन का उत्क्षेप (प्रस्तावना – बयान) करते हैं — निश्चय इस प्रकार हे जम्बो ! उस काल उस समय में साकेत नामका नगर था, उसके निकट उत्तरकुरु नामक उद्यान था, उसमें पासमिक संज्ञक यक्ष था, (यक्षायतन था) इस नगर मे मित्रनंदी नामका राजा राज्य करता था, उसके श्रीकान्ता देवी

हिन्दी अनुवादयुक्त विपाकसूत्र समाप्त.

 श्री आगमोदयसमिति 